मास्टर ऑफ सोशल वर्क
(M.S.W.)
अन्तिम वर्ष

समाजिक नीति नियोजन एवं प्रशासन
(Social Policy, Planning and Administration)
(प्रथम प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट [सतना] म.प्र. - ४८५३३४

सामाजिक नीति नियोजन एवं प्रशासन
(Social Policy, Planning and Administration)

ई–संस्करण 2023–24 / M.S.W. –II - 07

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. भरत मिश्र
कुलपति
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

पाठ्यक्रम निर्माण

चन्द्रभूषण पाण्डेय,

पाठ्यक्रम संयोजक

डॉ. अजय आर. चौरे,

पाठ्यक्रम अभिकल्पना एवं सम्पादक मण्डल :

डॉ. कमलेश थापक डॉ. ललित सिंह

डॉ. विनोद शंकर सिंह डॉ. राजेश त्रिपाठी

मुद्रण प्रस्तुति

डॉ. सन्तोष अरसिया, उपकुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सन्तोष राजपूत, सहायक कुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

शिवांगी त्रिपाठी

सम्पर्क सूत्र :
डॉ. कमलेश थापक, निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

दूरभाष– 07670–265460, E-mail – directordistancemgcgv@gmail.com, website : www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

प्राक्कथन...

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तपोस्थली, मंदाकिनी नदी के सुरम्य तट पर स्थापित महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय भारतरत्न नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन और संकल्पों की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो म.प्र.शासन द्वारा 12 फरवरी, 1991 को विशेष अधिनियम 09, 1991 द्वारा स्थापित हुआ।

विश्वविद्यालय का ध्येय वाक्य है–'विश्वं ग्रामे प्रतिष्ठितम्' अर्थात ग्राम विश्व का लघु रूप है। विश्वविद्यालय चित्रकूट में स्थित है, जो एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। नई पीढ़ी के लिये यह स्थान आदर्श एवं प्रेरणा का केन्द्र है।

विश्वविद्यालय में कृषि, प्रबंधन, अभियांत्रिकी, लोक विज्ञान, ग्रामीण विकास एवं स्थानीय स्वशासन, लोक शिक्षा, कला, संस्कृति एवं साहित्य सहित सभी अकादमिक धारायें प्रभावी रूप में उपस्थित हैं। विश्वविद्यालय, ग्राम को समाज जीवन की मूल इकाई मानकर शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध और प्रसार कार्यों से सर्वांगीण विकास के लिए विगत 3 दशकों से अधिक समय से समर्पित प्रयास कर ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के संकल्प में लगा हुआ है। विश्वविद्यालय ने अपनी गतिविधियों और कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल विकास के उन्नयन एवं प्रमाणन तथा सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है तथा शासन के सहयोगी के रूप में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान की परम्परा के आलोक में आई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 चिरवांछित जन आकांक्षाओं की सम्यक् अभिव्यक्ति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के युगान्तरकारी प्रावधानों को लागू करने में मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य रहा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नवाचारों के लिए सकारात्मक और अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विद्यार्थियों की पठन–पाठन की स्वतंत्रता, कौशल विकास के समुचित अवसर तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार आने वाले भविष्य के लिए तैयार करने की प्रतिबद्धता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों में स्पष्टतः दिखाई देती है।

विश्वविद्यालय ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों को दूरवर्ती के विभिन्न पाठ्यक्रमों में अर्थपूर्ण रूप से जोड़कर इन्हें सत्र 2023–24 से पुनः संशोधित/परिवर्धित रूप में प्रारम्भ किया है। विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के प्रसार एवं रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु दूरवर्ती माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष प्रयास कर रहा है। दूरवर्ती पद्धति से संचालित विभिन्न पाठ्यक्रमों में नियमित संपर्क कक्षाओं के आयोजन, उच्च शिक्षा की स्व–अध्ययन सामग्री एवं नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी को बेहतर शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चत की जा रही है।

विश्वविद्यालय के दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र द्वारा सत्र 2024–25 में संचालित परास्नातक, स्नातक तथा डिप्लोमा स्तरीय दूरवर्ती पाठ्यक्रमों के शिक्षार्थियों हेतु ई–स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष का अनुभव हो रहा है।
पाठ्यक्रम से जुडे सभी शिक्षार्थियों, अभिभावकों, प्रशासकों, समन्वयकों और अन्य सभी को मेरी मंगलकामनायें

प्रो. भरत मिश्रा
कुलपति

सामाजिक नीति नियोजन एवं प्रशासन
(Social Policy, Planning & Administration)

विषय सूची

क्रमांक	विषय
1.	भारत में सामाजिक नीति
2.	मौलिक अधिकार
3.	राज्य के नीति निर्देशक तत्व
4.	समाज कल्याण
5.	सम्बन्धित क्षेत्रों के लिए नीति एवं नियोजन
6.	अनुसूचित जनजाति कल्याण
7.	बाल कल्याण
8.	महिला कल्याण
9.	युवा कल्याण
10.	समाज कल्याण प्रशासन
11.	विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण प्रशासन
12.	POSDCORB
13.	सामाजिक अधिनियम
14.	जनहित याचिका
15.	अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम
16.	नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम
17.	उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम
18.	किशोर न्याय अधिनियम
19.	बंधित श्रम पद्धति उन्मूलन अधिनियम

1. भारत में सामाजिक नीति (Social Policy in India)

प्रजातांत्रिक देशों का संचालन संविधान द्वारा मान्य सिद्धांतों के आधार पर होता है। सारी नीतियाँ एवं वैधानिक व्यवस्था भी संविधान द्वारा मान्य सिद्धांतों के आधार पर होता है। भारत एक गणराज्य है। यहाँ का संविधान लिखित है और सामाजिक दायित्वों को पूर्ण करने के लिए इसमें नीतियों और योजनाओं का पूरी तरह समावेश है। इसी के आधार पर योजनाओं और नीतियों का निर्धारण होता है । सवंधान के अनुरूप एक राष्ट्रीय नीति निर्धारण किया गया है क्योंकि इसके अभाव में विकास के मार्ग में भटकाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। शासन और प्रशासन की आवश्यकता होती है। संसाधनों के समुचित उपयोग तथा सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए भी सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है। यदि सामाजिक नीति निर्धारित नही है तो अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। लोक नीति (Public Policy) वर्तमान में नीति का अर्थ उत्पन्न होने वाली मांगों, आवश्यकताओं और निर्णयों से है जो राजनीति द्वारा निर्धारित मूल्यों और मान्यताओं में निहित है तथा जो नीति के परिणामों से मूल्यों एवं मान्यताओं में परिवर्तन करता रहता है। **फ्रेटिस के अनुसार,** ''किसी परिस्थिति में क्या करना और क्या नहीं करना, के सम्बन्ध में लिये गए निर्णयों को ही नीति कहा जाता है।''

लोकनीति की आवश्यकता (Need of Public Policy) :–

1. समाजिक नीति तथा अन्य नीतियों और कार्यक्रमों का सम्बन्ध विस्तृत सामाजिक स्थिति तथा आर्थिक क्रियाओं से है। विभिन्न कार्यक्रमों का विशेष अर्थ विकास परियोजनाओं के प्रबंधन से है। नागरिकों के आर्थिक और सामाजिक समानता तथा न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक नीति की आवश्यकता पड़ती है। सामाजिक नीति की आवश्यकता सामाजिक एकता और पुनर्वास के लिए भी पड़ती है।

2. सरकार ही नही बल्कि विकास परियोजनाओं के नियमानुसार संचालन के लिए भी सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है। यह दोनों दशाओं में चाहे वह अल्पावधि की परियोजना हो या लम्बी अवधि की अपने प्रबंधन के लिये सामाजिक नीति की आवश्यकता पड़ती है। सामाजिक नीति की इस दृष्टि से वंचित लोगों के आर्थिक विकास, सामाजिक स्थिरता तथा प्रक्रियाओं की निरन्तरता के लिए आवश्यकता होती है।

3. सामाजिक नीति किसी भी प्रकार की कठिनाई के समय तथा प्राकृतिक या आर्थिक आपदाओं के समय प्रक्रिया को पूरी तरह से निरन्तरता प्रदान करने के लिए आवश्यक है। उदाहरण के लिए यदि किसी भी प्रकार की बेरोजगारी के लिए मुआवजा देने के नियम हैं तो अस्थायी बेरोजगारी की समस्या का समाधान आसान हो जाता है। लघु अवधि के ऋण की व्यवस्था है तो बाढ़, भूकम्प, तूफान और सूखा जैसी आपदाओं से गरीब लोगों को अधिक प्रभावित होने से बचाया जा सकता है। इसके लिये कहा जा सकता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में कम से कम मंदी आने की उम्मीद होती है और गरीब मजदूर कम से कम प्रभावी होते हैं।

4. सामाजिक नीति के कारण श्रमिकों में उत्पादकता एवं कार्यक्षमता में वृद्धि होती है उत्पादकता की वृद्धि के लिये अच्छी शिक्षा और मौलिक स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता

होती है। यह सामाजिक नीति द्वारा ही निर्धारित किया जा सकता है। इसके साथ ही कार्य करने की दशा तथा अन्य सार्वजनिक सेवाओं तक पहुँच भी अवश्यक है।

पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था में जिसका सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से होता है, सामाजिक नीति ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है इससे मजदूरी की लागत कम हुई है तथा पूँजीपतियों को लचीलेपन का अनुभव हुआ है। भारत में या अन्य पिछड़े देशों में सस्ता खाद्यान्न, मौलिक स्वास्थ्य सेवाएँ आवास की सुविधाएँ, शिक्षा की व्यवस्था आदि गरीबों की कम मजदूरी की क्षतिपूर्ति करता है।

5. सामाजिक नीति एक प्रक्रिया को विकसित करने का काम करता है जिसका प्रभाव सभी वर्गों ओर समूहों पर पड़ता है। कुछ प्रकार की उद्योगीकरण नीति कुछ विशेष प्रकार के रोजगारों का सृजन करती है। रोजगार में इस तरह की उन्नति कुछ विशेष प्रकार की सामाजिक नीति का निर्धारण करता है जैसे मजदूरों के परिवारों के लिये आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की व्यवस्था करना। इससे केवल राजनीतिक शक्ति ही नही अपितु कुछ विशेष प्रकार की प्रौद्योगिकी का भी विकास होता है जो सार्वजनिक निवेश के लिये दबाव बनाता है।

2. <u>भारत में सामाजिक नीति का विकास</u> :–

भारत में सामाजिक नीति और सामाजिक कल्याण का कार्य प्राचीन काल से होता चला आ रहा है किन्तु मुख्य रूप से सामाजिक नीति, समाज कल्याण, सामाजिक कार्य, सामाजिक सुरक्षा आदि का कार्य बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से माना जा सकता है। भारतीय संविधान के लागू होने के बाद ही इन क्षेत्रों में विशेष कार्य हुये हैं। बीसवीं सदी के आरम्भ में ब्रिटेन, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा स्वीडन और डेनमार्क आदि देशों में सामाजिक नीति सामाजिक कल्याण, सामाजिक सुरक्षा आदि कार्यों का आरम्भ हुआ।

भारत में प्राचीन काल से लोकनीति स्थापना और लोक कल्याण कार्यक्रम चलते रहे हैं। दान, परोपकार, दया, एवं उदारता आदि इस देश के प्राचीन ग्रंथों में स्पष्ट रूप से पढ़े जा सकते हैं। संयुक्त परिवार या ग्रामीण समुदाय में गरीबों और कम काम करने वालों को भी सम्मान देने की व्यवस्था थी। प्राचीन काल में प्रजा की सुरक्षा का कार्य राजाओं का उत्तरदायित्व था। राजा अपनी प्रजा को पुत्र समान मानता था और उसके दैहिक, दैविक, भौतिक दुःख को दूर करने का प्रयास करता था। मौर्य सम्राज्य में चाणक्य के नेतृत्व में जो व्यवस्थाएँ दी गयी हैं वे वर्तमान सामाजिक नीति और समाज कल्याण नीति से बहुत अधिक कल्याणकारी प्रजा के सुख से संबंधित है। सम्राट अशोक ने अपनी मुद्रा में अंकित कराया था कि प्रजा उसके पुत्र के समान है। उस काल में सिंचाई– सड़क मार्ग, आश्रय स्थल, वृक्षारोपड़, कुओं का निर्माण आदि का कार्य बहुत तेजी से हुआ। इसके लिए नियम निर्धारित थे जिन्हें हम सामाजिक नीति कह सकते हैं। स्वास्थ्य और शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। सड़कों पर गड्ढा, गन्दगी मिलावट आदि के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही और दंड देने का प्रमाण मिलता है।

चाणक्य के ''अर्थशास्त्र'' में राज्य में स्वयं गरीबों गर्भवती महिलाओं और उनके बच्चों, अनाथों, वृद्धों, अशक्तों, निराश्रितों आदि को सहायता प्रदत्त करने का प्रावधान था। कौटिल्य ने तलाक, प्रथक्करण तथा दूसरी शादी आदि के लिए भी नियमों का निर्धारण

कराया था। महिलाओं के सम्मान की रक्षा, अबोध कन्याओं की सुरक्षा तथा वेश्याओं, जुआड़ियों आदि के लिए भी नीति निर्धारित किया था।

गुप्त काल को 'स्वर्ण युग' कहा जाता है। इस अवधि में प्रजा बहुत ही सुखी थी। उनके लिये सारी कल्याण सुविधाएँ उपलब्ध थी। दानी व्यक्तियों द्वारा अस्पताल खोले गए जिसमें सभी का उपचार होता था। सांची के लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि भिक्षुओं को भीक्षा, ब्राहमण छात्रों तथा धार्मिक एवं परोपकारी संस्थाओं को उपहार एवं दान दिया जाता था

महाराजा हर्ष के समय में भी राज्य एवं परोपकारी संस्थाओं द्वारा अस्पताल, भिक्षुगृह, आश्रय गृह, आदि का निर्माण कराया जाता था तथा विद्वानों को आदर दिया जाता था। तक्षशिला एवं नालन्दा के विश्वविद्यालयों में विदेशों से भी छात्र आते थे जिनकी आवभगत शिक्षा आवास एवं भोजन की व्यवस्था राज्य द्वारा किया जाता था।

इस काल के संदर्भ में फाह्यान, चित्रांग, ह्वेनसांग आदि विदेशियों ने भी लिखा है। राज्य कल्याणकारी शासन व्यवस्था के सर्वोत्तम उदाहरण है।

मध्यकाल (Medieval Period) :– मुगल शासकों का युग कहा सकता है। राजपूत शासक बिल्कुल अराजक हो चले थे। वे लूटमार और राज्य के कोष में ऐशोआराम पर खर्च करने के आदी हो चले थे। इस अवधि में जनकल्याण के कार्यों का कोई प्रश्न ही नही उठता। अफगान राजाओं ने भी राजपूत शासकों की भांति ऐशोआराम में ही दिलचस्पी दिखाई। अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुगलक ने शिक्षा और कल्याण सम्बन्धी कुछ कार्यक्रमों का संचालन अवश्य किया। फिरोजशाह और शेरशाह सूरी ने कल्याण कार्यों में रुचि दिखलाया। उस काल का ही उदाहरणहै कलकत्ता से पेशावर तक ग्रांडट्रंक रोड। फिरोज शाह ने भी समाज कल्याण के क्षेत्र में अच्छा कार्य किया। स्कूलों की स्थापना, गरीब बच्चों को छात्रवृत्ति, भिक्षु गृहों का निर्माण एवं रख रखाव उस समय बहुत अच्छी प्रकार से हुआ। मुगल शासक अलग–अलग प्रवृत्ति के थे। कुछ लेखकों की मान्यता है कि मुगल शासकों ने जनकल्याण का कोई कार्य नहीं किया। एस०एम० जफर आई एच कुरेशी आदि के दृष्टिकोण से मुगल शासकों ने कल्याणकारी कार्य किया। अकबर काल मुगल सम्राटों की लोकप्रियता और जनकल्याण से सम्बन्धी कार्यों के लिये एक अच्छा उदाहरण है। व्यावसायिक कार्यों पर लगाए करों से दान का कार्य किया जाता था। उस समय के कल्याणकारी कार्यों में गरीबों की लड़कियों के विवाह के लिए अनुदान ऋण उपलब्ध कराना तथा करों की माफी, अस्पताल, आश्रयगृह, भिक्षा गृहों की स्थापना आदि थे।

परोपकारी संस्थाओं की स्थापना, विद्यालय एवं महाविद्यालयों की स्थापना के लिए निजी संस्थाओं को अनुदान, दान एकत्रीकरण को प्रोत्साहन आदि के नियम निर्धारित थे। अकबर के समय में सर्वधर्म समभाव का सिद्धांत था। उसी काल में दीन– इलाही (ईश्वर धर्म) का आरम्भ हुआ। हिन्दू समाज में विधवा पुनर्विवाह को प्रोत्साहन और सती प्रथा का विरोध इस काल में आरम्भ हो गया था। अकबर ने हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने की भी व्यवस्था किया था। जहाँगीर ने भी न्यायप्रियता एवं सामाजिक न्याय के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य किया । कोई भी व्यक्ति जहाँगीर के शासनकाल में न्याय पाने के लिए एक लगी हुई घंटी को बजाता था। बादशाह स्वयं आकर उसकी समस्याएँ सुनता था

और उस पर न्याय करता था। दोषी चाहे जो हो उसे दंड अवश्य दिया जाता था चाहे वह राज्य परिवार का कोई सदस्य ही क्यों न हो। मुगल शासन में औरंगजेब जैसे राजा के कारण ही बदनामी हुई। वह धार्मिक कट्टरवादी प्रकृति का था इसलिये दूसरे धर्मावलम्बियों को परेशान करता था और जबरन धर्म परिवर्तन कराता था।

3. **ब्रिटिश काल (The British Period)** :– ब्रिटिश काल को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। सर्वप्रथम ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपने व्यापारिक हितों के लिये कार्य किया दूसरा काल वह है जब ब्रिटिश ताज ने भारत का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया गया।

ईस्ट इंडिया कम्पनी अपनी व्यापारिक हितों के लिये जीते हुए राज्यों को संगठित करता रहा तथा समाजसेवकों और समाज कल्याण पर उनका कोई ध्यान नही था। वारेन हेंस्टिंग ने लोगों के कल्याण और न्याय को राज्य के लिए आवश्यक बताया तथा बनारस में (1791) हिन्दुओं के लिए बनारस में तथा मुसलमानों के लिए कलकत्ता में महाविद्यालयों की स्थापना कराया। चार्टर एक्ट 1913 में यह घोषित किया गया कि लोकशिक्षा राज्य का दायित्व है। जनस्वास्थ्य और शिक्षा को राज्य का दायित्व मानकर लोगों को चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध करायी गयी और शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों की स्थापना की गई। इसी काल में पानी व निकास की व्यवस्था तथा शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की गयी। 1856 में पास अधिनियम में विधवा पुनर्विवाह को मान्यता प्रदान किया गया। 1857 में हिन्दुस्तान का प्रशासन ब्रिटिश ताज (British crown) ने अपने हाथ में लिए और उसी समय से समाज सुधार, कल्याण, सुरक्षा आदि का कार्य आरम्भ हुआ।

ब्रिटिश शासल काल की सामाजिक नीति को हम निम्नलिखित भागों में बांट सकते हैं–

(1) **सामाजिक सेवाएँ (Social Services)** – इस अवधि में जनोपयोगी सेवाओं जैसे रेल, सड़क, सिंचाई साधन, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास आदि के लिए नीति का निर्धारण हुआ। हन्टर अयोग (Hunter Commision) ने 1882 में प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा को उन्नत करने, प्रयोगिक प्रशिक्षण को प्रश्रय देने तथा निजी संस्थाओं को अनुदान देकर कल्याण सम्बन्धी कार्यों को प्रोत्साहन देने की बात की गयी। लार्ड मेकाले ने विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रखने को कहा।

1920 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की स्थापना उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित और नियंत्रित करने के लिए किया। 1919 में शिक्षा प्रान्तीय सरकारों की जिम्मेदारी हो गयी। विभिन्न आयोगों और कमेटियों की स्थापना कर भारत में उच्च शिक्षा को प्रोत्साहन दिया गया।

जनस्वारथ्य के क्षेत्र में भी ब्रिटिश काल में अच्छा काम हुआ। शाही कमीशन (1859) में नागरिकों के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने की बात की गयी। 1904 के प्लेग आयोग तथा 1919 का भारत सरकार अधिनियम द्वारा जनस्वास्थ्य चिकित्सा, शिक्षा, अस्पताल, औषधालय तथा अनाथालय का हस्तांरण राज्य सरकारों को कर दिया गया। 1935 में जनस्वास्थ्य एवं चिकित्सा शिक्षा की स्थापना एवं प्रशासन का कार्य पूर्णरूपेण राज्य सरकारों को सौंप दिया गया।

आवास आदि के सम्बन्ध में इस काल में कोई कार्य नहीं किया गया। 1944 में शाही आयोग में आवास व्यवस्था को सरकार नियोक्ताओं, नगरपालिकाओं आदि को उत्तरदायी माना गया। आवास सर्वाधिक उपेक्षित विषय रहा है। जिसके कारण भारत में गन्दी बस्तियों में वृद्धि हुई।

(2) <u>समाज सुधार (Social Retorm)</u> – ब्रिटिश शासन काल में भारत में व्याप्त कुरीतियों बाल विवाह, दहेज प्रथा, महिलाओं को उत्तराधिकार न देना आदि समस्याओं के समाधान में अनेक नियम बनाए गए। सहमति आयु कानून (Age Consent Act) जिसमें नवयुवतियों की विवाह योग्य अवस्था को 10 से बढ़ाकर 12 वर्ष किया गया जो बाद में 1929 में शारदा एक्ट के द्वारा और बढ़ा दिया गया। यह उल्लेखनीय है कि इस अवधि में आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, ईसाई प्रचारकों, राजाराम मोहन राय आदि भारतीय लोगों ने भी समाज सुधार सम्बन्धी कार्य किए। ब्रिटिश शासन में वहाँ के कल्याणकारी कार्यों का भी प्रभाव यहाँ समाज सुधार कार्यक्रम पर पड़ा।

(3) <u>सामाजिक सुरक्षा (Social Security)</u> –ब्रिटिश काल में भारत में औद्योगिकीकरण का विकास बहुत तेजी से हुआ जिसके कारण श्रमिकों की संख्या बढ़ी। उनकी आवश्यकताओं जैसे दुर्घटना, मृत्यु, बेरोजगारी आदि समस्याओं ने श्रमिक संगठनों, मजदूर संघों प्रगतिशील नियोक्ताओं का ध्यान आकृष्ट किया। इसी अवधि में सरकार पर इस सम्बन्ध में कानून बनाने का दबाव बढ़ा जो बाद में फैक्ट्री एक्ट (1922) श्रमिक क्षतिपूर्ति कानून (1923) ट्रेड यूनियन अधिनियम (1926) तथा व्यापार विवाद कानून Trade Dispute Act(1929) के रूप में सामने आया। राज्य सरकारों ने भी प्रसूति लाभ अधिनियम (Maternity Benefit Act) का निर्माण किया। इस तरह सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए समाज सुधार के क्षेत्र में अनेक नीतियाँ बनी जो बहुत ही प्रभावशाली रही है।

(4) <u>समाज कल्याण (Social Welfare)</u> – ब्रिटिश शासन काल में वंचितों के लिए कुछ विशेष काम नहीं किया केवल उनकी शिक्षा के लिए 1944 में एक कानून बनाया जिसके माध्यम से पिछड़ी जातियों के लिए विशेष प्राविधान किए गए। ब्रिटेन में कल्याणकारी राज्य की स्थापना के साथ ही भारत में कल्याण सम्बन्धी कार्यों के लिए दबाव बढ़ा। इस अवधि में गरीबों, वंचितों और श्रमिकों की समस्याओं के समाधान से सम्बन्धित गैर सरकारी संगठनों का भी अभाव था। दो युद्धों के कारण भी ब्रिटिश शासन काल में इस क्षेत्र में कोई विशेष कार्य नहीं किए गए।

<u>स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में सामाजिक नीति</u> (PostIndependence Social Welfare policies) :–

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में सामाजिक नीति के निर्धारण के सम्बन्ध में अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारतीय संविधान कल्याणकारी राज्य की स्थापना के सम्बन्ध में पूर्ण रूपेण कटिबद्ध है। संविधान के सम्बन्ध में एक टिप्पड़ी की, ष्भारतीय संविधान में भारत को एक कल्याणकारी राज्य बनाने के लिए अनेक व्यवस्थाएँ की गयी थीं। संविधान की प्रस्तावना में ही कल्याण नीति निदेशक तत्वों एवं मौलिक अधिकारों की चर्चा की गयी है जो भारतीय सामाजिक नीति की ओर इंगित करता है।

<u>मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)</u>

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भारत को प्रभुता सम्पन्न प्रजातंत्रीय गणराज्य घोषित किया गया। संविधान में 42 वें संशोधन के साथ ''धर्मनिरपेक्ष'' और ''समाजवादी'' शब्द को जोड़ दिया गया जिससे भारत एक धर्म निरपेक्ष प्रजातांत्रिक समाजवादी देश घोषित हो गया। भारतीय संविधान में कल्याणकारी राज्य के रूप में समाज कल्याण के क्षेत्र में व्यापक व्यवस्थाएँ की गयी। प्रस्तावना में ही सभी नागरिकों के लिए–

(1) सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय

(2) विचार, अभिव्यक्ति विश्वास, धर्म और उपासाना की स्वतंत्रता

(3) पद एवं अवसर की समानता तथा

(4) राष्ट्र की एकता और व्यक्ति के गरिमा को सुनिश्चित करने वाला भाईचारा स्थापित करने का आश्वासन।

<u>मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)</u> :–

भारतीय संविधान एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र के नागरिकों के लिए वह सारे अधिकार देता है तो जो संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में स्वतंत्रता का अधिकार, अभिव्यक्ति का अधिकार और भाईचारा का अधिकार हैं। भारतीय नागरिकों के जो अधिकार दिये गए हैं वे मौलिक अधिकार हैं जिसके अनुसार कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान हैं और सभी को न्याय पाने के लिए कानून की शरण में जाने का अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार हम मौलिक अधिकारों का समूहीकरण कर सकते हैं।

(1) <u>समानता का अधिकार (Right to Equlity)</u> –अनुच्छेद 14 से 18 में समानता के अधिकारों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार समानता के अधिकार को हम निम्नलिखित बिन्दुओं में रख सकते हैं।

1. <u>कानून के समक्ष समानता (Equality Before Law)</u> – संविधान की अनुच्छेद 14 में सभी व्यक्तियों को कानून में समानता का अधिकार दिया गया है। इसके अनुसार, भारत अपने क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को विधि के समक्ष समानता से याविधियों का समान संरक्षण से किसी को वर्जित नहीं कर सकता है। कानून के समक्ष समानता ब्रिटिश संविधान से तथा कानून का समान संरक्षण (Equal Protection of Law) अमेरिकी संविधान से लिया गया है। इस धारा के अनुसार सभी व्यक्तियों को स्तर और अवसर (Status and Opportunity) की समानता उपलब्ध कराया है। भेदभाव पूर्ण एवं स्वेच्छाचारी कानूनों की रचना न हो इसके लिए मौलिक अधिकार कानून के समक्ष सभी को बराबर का दर्जा दिया गया है। राज्य के मनमानेपन पर रोक लगाने का काम भी इस अधिकार से प्राप्त हो गया है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह कोई भी हो देश के कानूनों के अन्तर्गत होगा।

2. <u>समाजिक समानता (Social Equality)</u> – संविधान की धारा 15 के अनुसार भारतीय समाज में समानता स्थापित किया गया है। धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान आदि के आधार पर किसी भी नागरिकों से भेदभाव नहीं किया जाएगा।

(1) दूकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन केन्द्रों में प्रवेश करने पर।

(2) ऐसे कुंओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों तथा सार्वजनिक स्थानों जिसकी पूर्णतः या आंशिक व्यवस्था राज्य द्वारा होता हो या सामान्य जनता के उपयोग के लिए समर्पित है। जन्म व धर्म वंश, जाति लिंग या जन्म स्थान के आधार पर प्रवेश या उपयोग को कोई भी प्रतिबंध नहीं होगा।

3. <u>आर्थिक समानता (Economic Equality)</u> – भारतीय नागरिकों को अनुच्छेद 16 के अन्तर्गत आर्थिक समानता प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 16 पांच भागों में विभक्त है। 16 (1) राज्याधीन नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के लिए सभी नागरिकों को समानता प्रदान की गयी है। 16 (2) में, केवल धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी एक के आधार पर किसी भी नागरिकों को राज्याधीन नौकरियों या पदों के लिए अपात्र नहीं माना जाएगा।

इस अनुच्छेद के अनुसार राज्य के अधीन नौकरियों की समानता का अधिकार प्रदान किया गया है। व्यक्तिगत नौकरियों पर यह लागू नहीं होता। अनुच्छेद का आशय है कि योग्यता, अनुभव आदि के आधार पर राज्याधीन नौकरियों में नियुक्ति के लिए समान अवसर सभी को प्रदान किया जाय।

4. <u>जातीय समानता (Caste Equality) Abolition of Unitouchabilty)</u> – अनुच्छेद 17 के अनुसार सभी को समान अवसर प्रदान करने के लिए छुआछूत को बिल्कुल समाप्त कर दिया जाए। अस्पृश्यता का किसी भी प्रकार उपयोग करना अपराध घोषित किया गया। भारतीय संविधान की यह अनुच्छेद छुआछूत की प्राचीन परम्परा पर कुठाराघात करता है सभी राज्यों को यह अधिकार दिया गया है कि अस्पृश्यता समाप्त करने के लिए काम करें और अस्पृश्यता करने वालों को दंडित करे।

5. <u>उपाधियों का निषेध (Abolition of Titles)</u> – संविधान की अनुच्छेद 18 के अनुसार समाज में उपाधियों को वर्जित किया गया है। ब्रिटिश काल में सम्पत्ति और पद के कारण उपाधियों दी जाती थीं जिससे समाज में भेदभाव उत्पन्न होता था । भारतीय संविधान ने इस प्रकार की उपाधियों पर बिल्कुल रोक लगा दिया है। सेना या विद्या सम्बन्धी उपाधियों के अतिरिक्त कोई भी उपाधि नहीं दिया जायेगा। विदेशों से मिलने वाले सम्मानों को प्राप्त करने के लिए भी राष्ट्रपति की सहमति की आवश्यकता होगी।

2. <u>स्वतंत्रता का अधिकार (Right to Feedom)</u> :–

संविधान की अनुच्छेद 19 से 22 तक में स्वतंत्रता के अधिकार दिए गए हैं। भारतीय नागरिकों को भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सभा की स्वतंत्रता संघ की स्वतंत्रता, पर्यटन की स्वतंत्रता, निवास की स्वतंत्रता, सम्पत्ति की स्वतंत्रता, व्यवसाय की स्वतंत्रता, दण्ड से सुरक्षा, तथा जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्रदान किया गया है।

भारतीय संविधान के 44 वें संशोधन द्वारा सम्पत्ति की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया गया है 44वें संशोधन के पश्चात् निम्नलिखित मौलिक अधिकार भारतीय संविधान द्वारा प्रदान किए गए हैं–

(1) <u>भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (Freedom of Speech and Exprevsion)</u> –

संविधान के अनुच्छेद 19 के अनुसार सभी भारतीय नागरिकों कोभाषण देने और अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का अधिकार प्रदान किया गया है। 1951 के संशोधन के अनुसार राज्य की सुरक्षा, न्यायालयों का अपमान, विदेशी राज्यों से सम्बन्ध तथा अपराध हेतु प्रेरित करने की स्वतंत्रता पर राज्य को नियंत्रित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। राज्य उक्त परिस्थितियों में अभिव्यक्ति और भाषण की स्वतंत्रता को नियंत्रित कर सकता है। भारतीय संविधान के 16वें संशोधन के अनुसार कोई व्यक्ति या समूह या समुदाय द्वारा गणराज्य से अलग होने की मांग के लिए स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया गया है। व्यक्तियों के साथ ही समाचार पत्रों, आकाशवाणी और दूरदर्शन को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान किया गया है।

स्वतंत्रता व अधिकार में अनुच्छेद 19 (1) के अनुसार मौलिक अधिकारों में व्यक्तियों को हड़ताल करने की स्वतंत्रता नहीं प्रदान किया गया है। संविधान की धारा 19 (2) के अनुसार व्यक्तियों को असीमित स्वतंत्रता का अधिकार नहीं दिया गया है। निम्नलिखित आधार हैं जो व्यक्ति की असीमित स्वतंत्रता को समाप्त करते हैं–

(1) <u>सभा सम्मेलन की स्वतंत्रता (Freedom to assemble)</u> – सभी नागरिकों को बिना अस्त्र के सभा और सम्मेलन करने का अधिकार है। राज्य सार्वजनिक सुरक्षा की दृष्टि से इस अधिकार पर नियंत्रण लगा सकता है।

(2) <u>संघ की स्वतंत्रता (Freedom to Unions)</u> – भारतीय संविधान में व्यक्तियों एवं समुदायों को संघ बनाने की स्वतंत्रता राष्ट्रीय विकास और एकता की दृष्टि से प्रदान किया गया है। देश की सुरक्षा के साथ खिलवाड़ करने वाले संघ का निर्माण वर्जित है और राज्य इस पर नियंत्रण कर सकता है।

(3) <u>घूमने फिरने की स्वतंत्रता (Right of Movement)</u> – भारतीय संविधान, भारतीय गणराज्य के अन्तर्गत कहीं भी घूमने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। किन्तु यदि कोई व्यक्ति अवैधानिक रूप से सार्वजनिक हित के विरुद्ध या राष्ट्र विरोधी कार्य की दृष्टि से भ्रमण करता है तो उसकी स्वतंत्रता को प्रतिबंधित किया जा सकता है।

(4) <u>निवास की स्वतंत्रता (Freedom to Settlement)</u> –भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के अनुसार कोई भी भारतीय नागरिक गणराज्य के अन्तर्गत कहीं भी निवास कर सकता है या भवन निर्माण करा सकता है।

(5) <u>व्यवसाय या वृत्ति की स्वतंत्रता (Freedom of Occupation and Profession)</u> – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के अनुसार सभी व्यक्तियों को अपना व्यवसाय, वृत्ति या व्यापार करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। जो व्यवसाय, व्यापार या वृत्ति सामाजिक हित में नही है उसे प्रतिबंधित किया गया है।

(6) अपराध दोष सिद्धि का संरक्षण (Protection of Conviction for offences) – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 20 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपराध दोष सिद्धि का संरक्षण प्राप्त है। कानून का उलघंन करने पर ही किसी को अपराधी घोषित किया जा सकता है। इसी अनुच्छेद के अन्तर्गत व्यक्ति को अपराधी सिद्ध होने तक अपराधी नहीं माना जाता है।

(7) व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं सुरक्षा का संरक्षण (Protection of Life and persend freedom/librly) – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार भारतीय नागरिकों को व्यक्तिगत सुरक्षा और स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है। इस अनुच्छेद के अन्तर्गत ही व्यक्ति को स्वतंत्रता और मान्यता का अधिकार प्राप्त है। 44वें संविधान संशोधन में आपातकाल की स्थिति में भी व्यक्ति को स्वतंत्रता प्रदान किया गया है।

(8) वन्दीकरण से संरक्षण (Protection Against Arrestation) – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 22 के अनुसार किसी भी नागरिक को वंदी बनाए जाने पर कुछ संरक्षण प्राप्त है। किसी भी व्यक्ति को अपराध के विषय में बताने के बाद ही वन्दी बनाया जा सकता है। वन्दी व्यक्ति अपने बचाव में और सुरक्षा के लिए वकील से परामर्श ले सकता है। 24 घंटे के अंदर ही वंदी को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है ताकि वन्दी व्यक्ति अपनी सुरक्षा कर सके। यह संरक्षण विदेशियों को तथा निवारक अधिनियमों (जैसे मादक द्रव्य सेवन अधिनियम, और राष्ट्रीय सुरक्षा से सम्बंधित अधिनियम) के वन्दी को प्रदान नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद22 (4) में दण्ड के अतिरिक्त कुछ निवारक निषेधों (Preventive Detention) का भी प्रावधान किया गया है जिससे अपराध करने से रोकने का प्राविधान है।

3. **शोषण के विरुद्ध अधिकार** :– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 के अनुसार किसी भी मानव से बेगार लेना या किसी प्रकार से लिए गए जबरदस्ती श्रम को वर्जित किया गया है। इस अनुच्छेद की तुलना अमेरिकी संविधान के 13वें संशोधन से किया जा सकता है। जिसमें दासता (Slavey) और अनिच्छित अधिसेविता (Involuntory Servitute) की समाप्त कर दिया गया। भारत में स्त्रियाँ, अनुसूचित जातियाँ, भूमिहीन श्रमिकों से विभिन्न प्रकार के अत्याचार किए जाते थे जो गुलामी प्रथा के समान था स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान ने इस प्रकार की गुलामी और अत्याचार को समाप्त कर दिया है। संविधान के अनुच्छेद 23 में ''मानव दुर्व्यापार'' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसमें केवल मनुष्यों और स्त्रियों के वस्तुओं की भांति क्रय विक्रय की भी बात नहीं है बल्कि इसमें स्त्रियों एवं बच्चों के अनैतिक व्यापार को भी निसिद्ध किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 35 के अनुसार संसद को यह अधिकार दिया गया है कि अनुच्छेद 23 द्वारा वर्जित कार्यों को करने से रोकने के लिये कानून में दण्ड की व्यवस्था करें। इसी आधार पर भारतीय संसद ने 1956 में Supprssion of Immoral Traffic in Women and Girls Act का निर्माण किया जिसके द्वारा मानव दुर्व्यापार को एक दण्डनीय अपराध घोषित किया गया। मानव की प्रतिष्ठा और गरिमा को ठेस पहुंचाने वाले बेगार और जबरदस्ती लिए जाने वाले कार्यों को अनुच्छेद 23 द्वारा वर्जित किया गया है। अनुच्छेद 24 के अनुसार बालश्रम को निसिद्ध किया गया है। इसी के आधार पर 14 वर्ष से कम आयु से कम के बच्चों को जोखिम भरे जैसे कारखाने, खान आदि कार्यों में नियुक्ति करना दण्डनीय अपराध है। इसी अनुच्छेद के

अन्तर्गत बालश्रम और बंधुआ मजदूरी को वर्जित करने की कार्यवाही की गयी है। शोषण के विरुद्ध अधिकार का उद्देश्य वास्तव में एक सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना है।

4. **धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (Right of freedom to Religion)** –भारतीय संविधान के अनुच्छेद 5 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता की चर्चा की गयी है जिसके अन्तर्गत व्यक्तियों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान किया गया है।

धार्मिक स्वतंत्रता को अधिकार के माध्यम से भारत को एक धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित चार आदर्श हैं–

1. राज्य अपने को किसी धर्म विशेष से सम्बद्ध नहीं करेगा और न ही किसी धर्म विशेष के अन्तर्गत रहेगा।

2. धार्मिक मान्यता, व्यवहार एवं प्रचार–प्रसार सम्बन्धी स्वतंत्रता प्रदान करते समय किसी भी व्यक्ति को अपेक्षाकृत सुविधा नहीं उपलब्ध कराया जायेगा।

3. किसी भी व्यक्ति को धर्म या धार्मिक विश्वासों के आधार पर राज्य कोई सुविधा नहीं देगा।

4. राज्य के अन्तर्गत किसी भी पद की प्राप्ति के लिए सभी धर्मावलम्बियों को समान अधिकार प्रदान किया गया है।

5. **संस्कृति और शिक्षा का अधिकार (Cutural and Education Al Right)** –संविधान के अनुच्छेद 27 और 28 द्वारा व्यवस्था की गयी है कि किसी भी व्यक्ति को धर्म विशेष की वृद्धि के लिए किसी भी प्रकार का कर नहीं देना होगा। सरकारी शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा को मना किया गया है। अन्य संस्थाओं में धार्मिक उपासना को वर्जित नहीं किया गया है किन्तु राज्य उसके किसी भी प्रकार की सहायता नहीं करेगा। संविधान के अनुच्छेद 29 और 30 में संस्कृति और शिक्षा के अधिकारों के माध्यम से धर्म निरपेक्ष राज्य की अवधारणा को विकसित किया गया है। इसी अनुच्छेद में अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के लिए निम्नलिखित प्राविधान किए गए हैं–

1. भारत के किसी भी राज्य क्षेत्र के अन्तर्गत या उसके किसी भी भूभाग पर व्यक्ति की अपनी लिपि, भाषा व संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार प्राप्त है।

2. किसी भी व्यक्ति को धर्म, मूल, वंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी भी आधार पर राज्य द्वारा पोषित या सहायतित शैक्षणिक संस्था में प्रवेश के लिए वंचित नही किया जाएगा।

3. धर्म या भाषा पर आधारित अल्पसंख्यकों को उनकी रुचि के अनुसार शिक्षण संस्थाओं की स्थापना का अधिकार प्रदान किया गया है।

4. किसी भी शिक्षण संस्था को धर्म या भाषा के आधार पर राज्य द्वारा सहायता प्रदान करने पर रोक नहीं लगाया जाएगा।

इस प्रकार संविधान का अनुच्छेद 21 और 30 भारतीय नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है और सभी को अपनी धर्म संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार प्रदान करता है। इसी अनुच्छेद के आधार पर भारत में सभी अल्पसंख्यकों को सुरक्षा प्रदान किया गया है।

6. **<u>संवैधानिक उपचारों का अधिकार (Right to Constitutional Remedies)</u>** — संविधान निर्माता डॉ० भीमराव अम्बेदकर ने इस उपबन्ध को भारतीय संविधान की आत्मा कहा है। मौलिक अधिकारों पर राज्य द्वारा किसी अतिक्रमण पर उन्हें प्रवर्तित करने के लिए संवैधानिक उपचारों (Constitutional Remedies) की व्यवस्था किया गया है। अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय और अनुच्छेद 226 द्वारा उच्च न्यायालयों द्वारा मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन की व्यवस्था किया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 32 (1) द्वारा भारतीय नागरिकों को संविधान के भाग 3 के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उच्चतम न्यायालय को समुचित कार्यवाही द्वारा प्रचलित करने के अधिकारों की सुरक्षा प्रदान करता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32 को चार खण्डों में विभक्त किया गया है जिसमें नागरिकों के मौलिक अधिकारों को लागू कराने के लिए उच्चतम न्यायालय में अपील का अधिकार दिया गया है।

भारतीय संविधान में संवैधानिक उपचार के द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता सुनिश्चित की गयी है। भारतीय संविधान की इस विशिष्ट व्यवस्था को पूर्व मुख्य न्यायधीश गजेन्द्र गजकर ने भारतीय संविधान का प्रमुख लक्षण और संविधान द्वारा स्थायी प्रजातांत्रिक भवन की आधारशिला कहा है। ये सारे अधिकार साधारण परिस्थितियों के लिए है। युद्ध, बाहरी आक्रमण, संकट काल में अपने मौलिक अधिकार के लिए न्यायालय में प्रार्थना नहीं कर सकता।

<u>मौलिक अधिकारों की समीक्षा (A Critical Evaluation of Fundamental Right)</u>

संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों की प्रकृति और स्वरूप के सम्बन्ध में आलोचनाएं बहुत पहले से ही की जाती रही है। इन आलोचनाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि—

1. आम नागरिकों के लिए आवश्यक अधिकारों की चर्चा संविधान में नही है जैसे काम पाने का अधिकार, शिक्षा का अधिकार तथा सहायता प्राप्ति का अधिकार आदि।

2. जो कुछ भी मौलिक अधिकार संविधान द्वारा दिए गए हैं उन्हें छीनने के लिए भी कई उपबन्धों के माध्यम से प्राविधान किया गया है।

3. संकटकालीन परिस्थितियों में मौलिक अधिकारों का स्थगन हो जाता है। जिससे राज्य सरकार द्वारा इनके दुरुपयोग की सम्भावना बढ़ जाती है। यानि संविधान द्वारा प्रदत्त

अधिकार कभी भी संकट कालीन परिस्थिति पैदा होने पर स्थगित और नियंत्रित किए जा सकते हैं।

मौलिक कर्त्तव्य (Fundamental Duties)

1950 में लागू भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों का विशद वर्णन है। प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार प्राप्त है किन्तु राष्ट्र के प्रति उसके क्या कर्त्तव्य और दायित्व होगा भारतीय संविधान में चर्चा नहीं थी। 1976 में 42वें संविधान संशोधन के मूल कर्त्तव्यों को जोड़ा गया। इस संशोधन में आधार पर निम्नलिखित मूल कर्तव्य माने गए हैं।

1. भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होगा कि वह संविधान का पालन करे तथा उसके आदर्शों, संस्थानों और राष्ट्रगान का सम्मान करे।

2. स्वतंत्रता हेतु भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के आदर्शों का पालन करें।

3. देश की संप्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करे।

4. आवश्यकता पड़ने पर देश की सेवा और रक्षा करे।

5. भारत के सभी नागरिकों में समरसता, भ्रातृत्व की भावना विकसित करे जो भाषा, जाति, धर्म, प्रदेश या वर्ग आदि के भेदभावों से दूर रहे।

6. देश की समन्वित संस्कृति की गौरवशाली परम्परा की रक्षा के लिए कार्य करे।

7. प्रकृतिक पर्यावरण जैसे वन, झील, नदी, वन्य जीव जन्तुओं की रक्षा करे एवं उनका संवर्द्धन करे।

8. वैधानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद ज्ञान और सुधार की भावना रहे।

9. सार्वजनिक सम्पत्ति की सुरक्षा करे एवं हिंसा से दूर रहें

10. व्यक्तिगत और सामूहिक प्रगति एवं उत्कर्ष के लिए कार्य करे।

राज्य के नीति निर्देशक तत्व एवं संवैधानिक साधन (Directive Principles of state Policy and Constitutional Instruments) :–

राज्य के नीति निर्देशक तत्व भारतीय संविधान की विशिष्ट विशेषता है संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 57 तक नीति निर्देशक तत्वों का वर्णन किया गया है । यह एक तरह से सरकार की संजीवनी व्यवस्था है जिसमें सामाजिक न्याय का दर्शन निहित है। इन तत्वों द्वारा ही राज्यों के ऊपर सुदृढ़ उत्तरदायित्व डाला गया है ताकि राज्य देश के लोकतंत्र के लिए एक सुदृढ़ आधार का निर्माण कर सके।

राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अर्थ एवं उद्देश्य (Meaning and objectives of Directive Principles of State Policy) :–

भारतीय संविधान में राज्यों के लिए कुछ सिद्धांतों की व्यवस्था है जिससे कि राज्य अपने राज्य के लिए कल्याणकारी योजनाओं का निर्माण कर सके। देश की शासन व्यवस्था के लिए वह महत्वपूर्ण एवं मौलिक तत्व है। सरकारों और सरकारी संस्थाओं को यह निर्देश है कि वे अपने नागरिकों में नागरिकता के सम्पूर्ण तत्व विकसितकरें। राज्य अपने नागरिकों के जीवन स्तर को ऊंचाई पर ले जाने के लिए हमेशा तैयार रहे तथा इसी के लिए नियमों का निर्धारण करे। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है कि राज्य के नीति निर्देशक तत्वों का उद्देश्य नीतियों के कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिए सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है।[8] संविधान की प्रस्तावना में जिन बातों का उल्लेख किया गया है उसी को व्यावहारिक रूप देने का काम नीति निर्देशक तत्वों में किया गया है। ये सिद्धांत कार्यपालिका और व्यवस्थापिका को दिए जाने वाले ऐसे निर्देश हैं जिसके अनुसार संविधान का पूर्णतः और उचित पालन हो सके। जस्टिस केनिया के अनुसार, ''निर्देशक तत्वों में राष्ट्र की बुद्धिमत्तापूर्ण स्वीकृति है जो संविधान के माध्यम से अभिव्यक्ति की गयी है। ये सिद्धांत शासन की नीतियों को निर्देश करने के लिए ही बनाए गए हैं। ताकि भारत में आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र स्थापित हो सके।''

भारतीय संविधान में नीति निर्देशक तत्वों के सम्बन्ध में श्री एच.आर. गोखले का विचार है कि, हमारे संविधान में वर्णित नीति निर्देशक तत्व इस दृष्टि से नए हैं कि किसी पुराने संविधान में इन तत्वों का वर्णन नहीं किया गया है। इसकी रचना आयरलैण्ड के संविधान की तरह किया गया है। आयरलैण्ड के संविधान के भांति ही भारतीय संविधान यह स्पष्ट करता है कि नीति निर्देशक तत्वों का प्रवर्तन न्यायालयों के माध्यम से नहीं कराया जा सकता क्योंकि इन तत्वों की प्रकृति ऐसी है कि इनका क्रियान्वयन विधानमण्डल ही कर सकता है। किन्तु ये तत्व देश के शासन के लिए मूलभूत है और राज्यों का यह कर्त्तव्य है कि वे इस आधार पर कानूनों का निर्माण कर उन्हें क्रियान्वित करें। इसकी प्रकृति की विवेचना करते हुए विद्वानों ने लिखा है कि राज्य के नीति निर्देशक तत्वों की रूपरेखा लचीली है। अतः देश की सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल इन्हें ढाला जा सकता है। स्वरूप की दृष्टि से बहुत ही व्यापक है जिसमें हमें राज्य और समाज की रूपरेखा दिखलाई पड़ती है।

राज्य की नीति निर्देशक तत्व(Dirctive Priniciples of State Policy)

अनुच्छेद 36 – राज्य को परिभाषित करना

अनुच्छेद 37 – शासन के मूल अंग

अनुच्छेद 38 – लोक कल्याण हेतु राज्यों की सामाजिक व्यवस्था का निर्माण

अनुच्छेद 39 – राज्य द्वारा नागरिकों के कल्याण हेतु नीति का निर्धारण

अनुच्छेद 40 –ग्राम पंचायतों का संगठन

अनुच्छेद 41– विकास, शिक्षा, बेरोजगारी, बुढापा विकलांगता की स्थिति में राज्य कार्य साधक बने।

अनुच्छेद 42 – काम की न्यायोचित और न्यायसंगत दशाएं उपलब्ध कराना।

अनुच्छेद 43 –कानून या आर्थिक संगठनों के माध्यम से राज्य नागरिकों का जीवन स्तर ऊंचा करेगा।

अनुच्छेद 44 – एक समान व्यवहार संहिता का निर्माण।

अनुच्छेद 45– बालकों की शिक्षा की व्यवस्था करना।

अनुच्छेद 46 – समाज के पिछड़े वर्गों का विकास।

अनुच्छेद 47 – राज्य द्वारा आहार, पुष्टि एवं जीवन स्तर ऊचा बनाना।

अनुच्छेद 48 – राज्य द्वारा कृषि और पशुपालन की आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों का विकास करना।

अनुच्छेद 49 – राष्ट्रीय महत्व के स्मारकों, स्थलों और वस्तुओं का संरक्षण करना।

अनुच्छेद 50 – न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करना।

अनुच्छेद 51 – अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की व्यवस्था करना।

नीति निर्देशक तत्वों की उपयोगिता और महत्व (Utility and importance of Directive Principles) :–

नीति निर्देशक तत्व अत्यधिक महत्वपूर्ण और उपयोगी हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान सभा में इसके महत्व को बतलाते हुए कहा था, मेरे विचार से निर्देशक तत्व बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये तत्व यह सिद्ध करते हैं कि हमारा लक्ष्य आर्थिक प्रजातंत्र है। हम केवल यही नहीं चाहते कि संविधान में वर्णित विभिन्न व्यवस्थाओं के माध्यम से संसदीय प्रणाली की स्थापना हो जाए अपितु हमारे आर्थिक आदर्श और सामाजिक व्यवस्था के सम्बन्ध में निर्देशक रहे इसीलिए हमने जानबूझ कर निर्देशक तत्वों को स्थान दिया है। संविधान का उद्देश्य केवल राजनैतिक प्रजातंत्र की व्यवस्था करना ही नहीं है। वर्नाऐसे कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है जिसमें आर्थिक और सामाजिक प्रजातंत्र भी हो।

राज्य की नीति निर्देशक तत्व इस आदर्श की पूर्ति के लिए महत्वपूर्ण साधन हैं। इनका महत्व निम्नलिखित बातों से स्पष्ट है–

(1) जनमत की शक्ति (Power of Public opinion) – नीति निर्देशक तत्वों के पीछे न्यायालय की शक्ति नहीं अपितु जनमत की शक्ति रहती है। यही प्रजातंत्र का वास्तविक स्वरूप है। यदि कोई सरकार इनकी उपेक्षा करती है तो उसे विधान मण्डल और समस्त देश में विरोध का सामना करना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में सत्ताशीन होना कठिन हो जाता है। जनता की शक्ति के रूप में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों को देखा जा सकता है।

(2) न्यायिक मान्यता (Judicial Recomendation) –केवल विधान मण्डल और कार्यपालिका ही नहीं बल्कि न्यायपालिका के लिए भी यह पथ प्रदर्शन का कार्य करता है।

संविधान के नीति निर्देशक तत्व को मूलभूत बताया गया है इसीलिये यह केवल बहुमत दल की इच्छा मात्र नही है बल्कि यह समस्त राष्ट्र के प्रतीक के रूप में मान्य है।

(3) <u>नैतिक आदर्शों का महत्व (Importance of Moral Values)</u> – मानवाधिकारों की घोषणा आदि कछ ऐसे कार्य हैं जो नीति निर्देशक तत्वों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान कराते हैं तथा इसके आदर्शों का पालन करते हैं।

(4) <u>शासन का मूल्यांकन (Evaluation of Government)</u> – शासन की सफलताओं और असफलताओं का मापन करने का काम भी नीति निर्देशक तत्वों द्वारा किया जाता है। विरोधी पक्ष हमेशा नीति निर्देशक तत्वों के आधार पर सरकार का विरोध करते हैं जो जनमत के बदलने का प्रयास माना जाता है।

(5) <u>सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के प्रतीक (Symbol of Socio Ecoamic System)</u> – लोक कल्याण राज्य की स्थापना के साथ ही नीति निर्देशक तत्वों द्वारा सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को सुनिश्चित करने का काम नीति निर्देशक तत्वों द्वारा होता है।

<u>मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक तत्वों में अन्तर</u>

1. मौलिक अधिकारों का स्वरूप नकारात्मक है जबकि नीति निर्देशक तत्वों का स्वरूप सकारात्मक होता है।

2. मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए न्यायलय की शरण लिया जा सकता है। लेकिन नीति निर्देशक तत्व न्यायालय के हस्तक्षेप से बाहर है।

3. मौलिक अधिकारों का सम्बन्ध कर्त्तव्यों से है जबकि नीति निर्देशक तत्वों का सम्बन्ध राज्य से है।

4. मौलिक अधिकार लोगों को प्रत्यक्षतः प्रदत्त किए गए है। लेकिन नोति निर्देशक तत्वों का उपयोग राज्य द्वारा विधिपूर्वक कार्यान्वित करने के लिए है।

5. मौलिक अधिकारों का क्षेत्र सीमित है किन्तु नीति निर्देशक तत्वों का क्षेत्र व्यापक होता है।

6. मौलिक अधिकार सार्वभौमिक नही हैं इन पर कुछ प्रतिबन्ध है पर नीति निर्देशक तत्वों पर किसी भी प्रकार का प्रतिबंध नही है।

<u>नीति निर्देशक तत्वों की आलोचना</u> (Criticism of Directive Principles of State Policy) :–

"नीति निर्देशक तत्व वह चेक है जिसका भुगतान बैंकों की मर्जी पर निर्भर है।'' के. टी. शाह के इस कथन के सम्बन्ध में कई विचारकों ने नीति निर्देशक तत्वों की आलोचना किया है। कुछ लोगों ने इसे संविधान निर्माताओं की इच्छा का संग्रह माना है। इन तत्वों की आलोचना का मुख्य आधार है–

1. यह केवल एक राजनैतिक घोषणा मात्र है क्योंकि इसे किसी भी प्रकार की वैधानिक शक्ति प्रदान नहीं किया गया है। यह केवल राज्यों की इच्छा पर है कि वे कब इसे लागू करे।

2. नीति निर्देशक तत्व का कोई एक दर्शन नहीं है। ये अस्पष्ट है और इसमें कई स्थानों पर पुनरावृत्ति भी हुई है।

3. इसकी व्यावहारिकता और औचित्य भी स्पष्ट नही है।

4. भारतीय शासन में गतिरोध और परस्पर विरोध भी उपस्थित हो सकता है।

5. राजनैतिक दल के द्वारा इसकी व्याख्या कर जनता को वोट के लिए गुमराह किया जाता है।

6. कुछ राजनैतिक स्वार्थों के कारण इन तत्वों का संविधान में प्राविधान किया गया है जिसके कारण इससे नागरिकों के हितों की पूर्ति नहीं होती है।

7. इसमें केवल लक्ष्यों की चर्चा की गयी है। लक्ष्यों को प्राप्त करने के साधनों की कोई चर्चा नहीं की गयी है।

सामाजिक नीति की विशेषताएँ (Characteristics of Social Policy)

भारत में सामाजिक नीति का क्षेत्र विस्तृत है। वे समस्त कार्यक्रम जिनका सम्बन्ध भारतीय समाज से है सामाजिक नीति के अन्तर्गत आते हैं। सामाजिक नीति में निम्नलिखित मुख्य कार्यक्रमों को जोड़ा जा सकता है–

1. कृषि में सुधार।
2. खाद्यान्न एकत्रित करना और उसका वितरण।
3. शिक्षा।
4. सार्वजनिक कार्यों के माध्यम से रोजगार सृजित करना।
5. सार्वजनिक सेवाओं और शिक्षण संस्थाओं में सेवाओं की व्यवस्था करना।
6. छोटे कार्यों और लघु बचत की ओर निर्देशित गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम।
7. विकेन्द्रीकरण और कुछ संशाधनों के माध्यम से शासन के ढांचे में परिवर्तन करना।

सामाजिक नीति का क्षेत्र :–

(1) सामाजिक नीति का मुख्य लक्ष्य समाज कल्याण है। सामाजिक कल्याण से सम्बन्धित सारी नीतियों का निर्धारण सामाजिक नीति के अन्तर्गत होता है।

(2) सामाजिक नीति का निर्धारण संवैधानिक नीतियों के आधार पर होता है। इसी आधार पर सरकारी निर्णयों या योजनाओं का निर्माण होता है।

(3) सामाजिक न्याय, आरक्षण, महिला सशक्तिकरण, बाल– कल्याण, सामाजिक सुरक्षा आदि कार्यक्रमों का निर्धारण सामाजिक नीति के अन्तर्गत किया जाता है।

(4) परिस्थितियों के अनुसार सामाजिक नीति में परिवर्तन होते रहते हैं।

(5) संघीय राज्य होने के कारण भारत में केन्द्र और राज्य सभी को सामाजिक नीति बनाने की स्वतंत्रता है।

भारत में सामाजिक नीति के सम्बन्ध में धारणाएँ :–

1. भूमि सुधार (Land Reform) –भारतीय संविधान में भूमि सुधार राज्यों का विषय है। यह कहना गलत न होगा कि राज्यों ने भूमि सुधार के सम्बन्ध में बहुत कम काम किया है। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन कानून (Zamindari Abolition Act, 1952) में बना किन्तु भूमि का स्वामित्व जस का तस बना रहा। पूरे देश में तीव्र भूमि पुनर्वितरण के न होने का प्रभाव घरेलू बाजार पर भी पड़ा है। कृषि उत्पादन पर बड़े भूस्वामियों का स्वामित्व बना रहा जो भूस्वामी से पूंजीपति बनते चले गए किन्तु गरीब किसान जिनके पास भूमि के छोटे–छोटे टुकड़ें हैं वे असुरक्षित महसूस करने लगा है। उनके पास उत्पादन के लिए लागत नही है। भारतीय सामाजिक नीति में भूमि सुधार तथा संस्थागत परिवर्तन पर ध्यान नहीं दिया गया है। पहले जिस भूमि सुधार की बात की जाती थी वह नयी योजना दस्तावेजों के दस्तावेजों में नहीं दिखाई देते हैं। भूमि के छोटे–छोटे टुकड़ों में विभक्त हो जाने के कारण कृषि कार्य बहुत ही कठिन हो गया है वह कम उत्पादकता वाला है तथा सिंचाई आदि सुविधाओं के लिए निवेश करना कठिन है। कृषि के सामूहीकरण या ठेके पर खेती की बातें आजकल बहुत जोरों पर उठ रही है। किन्तु भारतीय किसान इसके लिए तैयार नही है। उसे अपना अस्तित्व खतरे में दिख रहा है। भूमि सुधार जिसे हम भूल चुके हैं उसकी इस समय आवश्यकता है जिससे कि कृषि में संस्थागत परिवर्तन लाया जा सके और आर्थिक विकास को गति प्रदान किया जासके।

2. खाद्यान्न की प्राप्ति और विवरण (Food Procurement and Land Distribution) – आरम्भिक अवस्था में भारतीय खाद्य प्रबंधन तीन प्रकार का था। मूल्यों की स्थिरता, कृषकों को लाभ दिलाने तथा लागत मूल्य से अधिक उत्पादन तथा उपभोक्ताओं को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए प्रणाली की व्यवस्था करना। इनके लिए कृषि उत्पादों का न्यूनतम मूल्य और सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विकास किया गया। सार्वजनिक वितरण प्रणाली अब मात्र गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों के लिए ही काम करती हैं। बाकी लोगों के लिए अनुदान की व्यवस्था समाप्त कर दी गयी है। भारतीय कृषक दबाव में है क्योंकि उसे जो सबसिडी मिलती थी वह धीरे–धीरे कम हो गयी हैं और उत्पादन लागत (खाद, बीज, जुताई, सिंचाई मजदूरी आदि) बढ़ गयी है।

3. रोजगार और सार्वजनिक कार्य (Employment and Public work) – सामाजिक नीति निर्धारण के इस क्षेत्र में योजनाओं का निर्माण बहुत हुआ है। किसी भी देश में लोगों को भरपूर रोजगार मिलना विकास के लिए आवश्यक है। ग्रामीण विकास व क्षेत्र में

समेकित ग्रामीण विकास योजना (IRDP) तथा अनेक लक्ष्य समूहों के लिए योजनाओं का निर्माण हुआ। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना वर्तमान समय में गरीब मजदूरों के लिए काम दिलाने के लिए बना है। कई ऐसी भी योजनाएँ बनी जो गरीबों के लिए बनाई तो गयी लेकिन उसका लाभ सम्पन्न लोगों ने उठाया। इस तरह भारतीय गांवों में युवकों कोरोजगार की आवश्यकता है। यदि उन्हें पूर्ण रोजगार प्राप्त हो जाय तो देश की अर्थव्यवस्था आगे बढ़ सकती है।

4. **<u>शिक्षा (Education)</u>** – सामाजिक नीति का बहुत व्यापक और महत्वपूर्ण कार्य है सबको शिक्षा का अवसर प्रदान करना। भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में यह प्राविधान है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा प्रदान किया जाय। इस क्षेत्र में नवीनतम विकास सबके लिए अनिवार्य शिक्षा का कानून बनाकर किया गया है। प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना और शिक्षकों की नियुक्तियाँ हो रही हैं। किन्तु देखने में आ रहा है कि शिक्षक विद्यालयों में नहीं जाता। आए दिन समाचार पत्रों में देखने को मिलता है विद्यालय में ताला लगा रहता है। नयी नियुक्तियों वाले शिक्षक शिक्षा देने के लिए नहीं उसे वेतन के लिए इस क्षेत्र में हैं। इस तरह इस क्षेत्र में निवेश तो बढ़ा है किन्तु आज भी गांवों और शहरों में अनेक बच्चे विद्यालयों में नियमित रूप से नहीं जा रहे हैं। 1990 के आसपास प्रौदों की साक्षरता के लिए सम्पूर्ण साक्षरता अभियान चलाए गए जिनसे प्रौढ़ों में शिक्षा के वृद्धि प्रति जागरूकता आयी कई राज्यों में इस कार्यक्रम ने साक्षरता दर में अभूतपूर्व किया। केरल में यह साक्षरता दर 90 प्रतिशत से अधिक हो गयी किन्तु कुछ राज्यों में इस योजना का उत्साहजनक लाभ नहीं मिला। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत कुछ किया जा रहा है किन्तु अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

5. **<u>सकारात्मक कार्य (Affirmative action)</u>** – भारत में सकारात्मक कार्य के क्षेत्र में एक मौलिक कार्य हुआ है कुछ वंचित सामाजिक समूहों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण । व्यक्तिगत क्षेत्र पर इस आरक्षण के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का दबाव नहीं बनाया गया है। 1980 तक यह आरक्षण केवल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के लिए था किन्तु उसके बाद अन्य पिछड़ा वर्ग की जातियों को भी आरक्षण प्रदान किया गया। ये वे जातियाँ हैं जो अपनी राजनैतिक और आर्थिक आवाज को तेज कर सकीं। इस प्रकार भारत की लगभग आधी आबादी को आरक्षण प्राप्त हुआ। शिक्षण संस्थाओं में इन जातियों की पहुँच बहुत तेज हुई है जबकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोग आरक्षण का लाभ पूरी तरह से नहीं उठा पा रहे हैं। गांवों में आज भी इस वर्ग के एक दो लोग ही शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ पा रहे हैं जबकि अन्य पिछड़ी जातियों ने दो दशकों में आरक्षण का भरपूर लाभ उठाया। यहाँ कुछ जातियाँ ऐसी हैं जो क्रीमिलेयर में आ सकती हैं लेकिन उनके पास आवाज उठाने की ताकत है इसलिए उनको आरक्षण का लाभ प्राप्त हो रहा है।

<u>समाज कल्याण (Social Welfare)</u>

समाज कल्याण का सम्बन्ध कल्याणकारी राज्य से है। एनसाइक्लोपेडिया ब्रिटानिका (Encyclopedia Britonica) के अनुसार, ‘‘समाज कल्याण कानूनों और संस्थाओं की एक प्रणाली है जिसके द्वारा राज्य सरकार अपने नागरिकों के आर्थिक और सामाजिक कल्याण की रक्षा करता है और उसमें वृद्धि करता है यह प्रायः बेरोजगारों, दुर्घटना बीमारी और

वृद्धावस्था के विरुद्ध कार्य करने वाले विभिन्न सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों पर आधारित होता है।'' एनसाइक्लोपिडिया ऑफ सोसल साइंसेज (Encyclopedia of Socialsciences) ने उक्त उक्त परिभाषा को सुनिश्चित किया है और स्पष्ट किया है कि श्कल्याणकारी राज्यश एक समाज के वैधानिक व्यवस्था है। इसलिए इसके सदस्यों की भलाई के लिए मौलिक उत्तरदायित्व के निर्वाह के लिए एक संस्थागत उपलब्धि है। सामान्यीकरण समाज कल्याण प्रणाली का मौलिक सिद्धांत है जो शारीरिक, मानसिक या सामाजिक विकलांगता वाले लोगों को जीवित रहने, कार्य करने तथा सामान्य वातावरण निर्माण के लिए विकसित करता है। समाज कल्याण का लक्ष्य समाज के वंचित वर्ग जैसे कि निराश्रित बच्चे, महिलाएँ, पिछड़ी जनजातियाँ, जातियाँ तथा वर्ग का विकास करना है।

भारत में समाज कल्याण के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण : भारत में तीव्र गति से हो रहे शहरीकरण और औद्योगीकरण तथा विकास के पीछे सूचना और प्रौद्योगिकी की ताकत के कारण औद्योगिक विकास बहुत तेजी से हुआ है। पूर्व में ही भीड़ भरे शहरों की ओर ग्रामीण जनसंख्या का शहरों की ओर रोजगार के लिए पलायन ने अनेक भयंकर समस्याओं को उत्पन्न किया है जिसके अत्यधिक भीड़, स्लमों का स्थायित्व, संयुक्त परिवार प्रणाली की समाप्ति, बेरोजगारी और गरीबी आदि सम्मिलित हैं।

अस्पृश्यता, महिलाओं और बच्चों का भोजन आदि सामाजिक समस्याएँ भारत में पहले से ही विद्यमान है। वंचित लोगों की रुचियों की रक्षा के लिए भारतीय संविधान की अनुच्छेद 14 में यह कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति कानून के समक्षसमानता से वंचित नहीं किया जाएगा। संविधान की धारा 41 के अनुसार संविधान में शिक्षा का अधिकार तथा अपंगता और वृद्धावस्था के लिए सार्वजनिक सहायता की बात की गयी है। इन वर्गों की सुरक्षा के लिए कुछ कानूनों का निर्माण भी किया गया है।

समाज कल्याण की परिभाषाएँ : समाज कल्याण का क्षेत्र विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार का है। किसी देश के प्रशासकीय संगठन संरचना के ऐतिहासिक विकास क्रम, विकास के स्तर एवं उद्देश्य कार्यक्रमों के प्रकार एवं उनके क्रियान्वयन की गति, सरकार और स्वयं सेवी क्षेत्र के मध्य दायित्व का विभाजन तथा सामाजिक संस्कृतिक रूपरेखा को प्रदर्शित करता है। समाज कल्याण सरकारों और स्वैच्छिक संगठनों का आभास कराता है। जिनका उद्देश्य परिवारों, व्यक्तियों की इस प्रकार सहायता करना है ताकि उनकी आय में समानता और स्थिरता आ सके। सभी को स्वास्थ्य सुविधाएँ, आवास, सामाजिक कल्याण का लाभ, सामाजिक समन्वय एवं मनोरंजन की सुविधाएँ प्राप्त हो सके।

वीवरेज (Bevredge) के अनुसार– समाज कल्याण जो आय समर्थक योजनाओं और सेवाओं की स्थापना करता है। देश की समस्त जनसंख्या के लिए जीवन पर्यन्त समाज कल्याण की सुविधाएँ उपलब्ध कराना आवश्यक है। ब्रिटेन में इसी रिपोर्ट के आधार पर अभाव, रोग, अज्ञानता, गंदी बस्तियों एवं बेरोजगारी जैसी बुराइयों को समाप्त करने की बात की जाती गयी है। इस प्रकार इंग्लैण्ड में समाज कल्याण सामाजिक सुरक्षा एवं व्यापक स्वास्थ्य बीमा को समाज कल्याण का मुख्य तत्व माना गया है। जन समुदाय को विकसित करने वाले विधानों, सामाजिक नीतियों, कार्यक्रमों, संस्थाओं संशाधनों एवं सेवाओं को उपलब्ध कराना समाज कल्याण का मुख्य क्षेत्र है। फ्रीड लैंडर (Friedlander) के अनुसार समाज कल्याण सामाजिक सेवाओं और संस्थाओं की संगठित व्यवस्था को कहा

जाता है। जिसका उद्देश्य जीवन, स्वास्थ्य तथा व्यक्ति एवं समूहों की सहायता करना है जिससे वे अपनी क्षमता का पूर्ण विकास कर सकें तथा अपने परिवार और समुदाय की आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य स्थापित कर कल्याण को प्रोत्साहित कर सके।

बेन वरसे (Wayne Varsey) ने समाज कल्याण के दो मुख्य तत्व बतलाया है–

1. परिवार जो व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मूलभूत सामाजिक समर्थन एवं शक्ति प्रदान करता है को विकसित करने का उपाय।

2. व्यक्ति की क्षमता को बल प्रदान करना ताकि वह परिस्थितियों और समस्याओं का समाधान कर सकें।

विस्तार से कहा जाय तो समाज कल्याण के अन्तर्गत जनसमूह के अधिकांश भाग के लिए शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था करना है।

भारतीय पंचवर्षीय योजनाओं के अनुसार समुचित जीवन स्तर सामाजिक न्याय, व्यक्ति और समूह की आत्माभिव्यक्ति के माध्यम से सांस्कृतिक विकास के अवसर तथा सामाजिक समन्वय की प्राप्ति हेतु जीवन स्तर की व्यापक अवधारणा है। इसमें मूल आवश्यकताओं जैसे भोजन, आवास एवं वस्त्र, पारिवारिक जीवन की संतुष्टि, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य मनोरंजन सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा क्षमताओं की अभिव्यक्ति के अवसर तथा क्रियाशील एवं मनोरंजनात्मक कार्यों में भाग लेने का सम्मिलित किया गया है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा है, हम कल्याणकारी राज्य की बात करते हैं और अपनी शक्तियों को इसकी प्राप्ति के लिए निर्देशित करते हैं. कल्याण भारत में सभी व्यक्तियों की साझी सम्पत्ति होनी चाहिए न कि केवल कुछ विशेषाधिकार प्राप्त समूह की जैसा आजकल है, विशेषकर उन व्यक्तियों की सम्पत्ति होना चाहिए जो अभावग्रस्त हैं तथा जिन्हें विकास और प्रगति के अवसर प्राप्त नहीं है। उन्होंने आगे कहा है कि मानव स्वास्थ्य का दृष्टिकोण समाज कल्याण की केन्द्रीय विचार धारा के प्रत्येक स्वरूप में निहित होना चाहिए। कल्याणकारी राज्य सभी नागरिकों को शारीरिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य हेतु न्यूनतम अवसर प्रदान करता है, यह शोषण एवं असंतुलन को दूर कर व्यक्ति के आत्म विकास हेतु व्यवस्था करता है।

समाज कल्याण की अवधारणा में ऐसे व्यक्तियों एवं परिवारों को जो कि स्वयं अपने आश्रितों को स्वस्थ रखने तथा सारे भौतिक क्षमता प्रदान करने में असमर्थ हों को सेवाएँ प्रदान करने तक सीमित है।

हावर्ड (Howard) का विचार है कि समाज कल्याण शारीरिक, मानसिक भावनात्मक, आर्थिक तथा सामाजिक रूप से निःशक्त तथा अन्य किसी भी प्रकार की सहायता से वंचित व्यक्तियों एवं समूहों के जीवन दशाओं को उन्नत करने से सम्बंधित है।

योजना आयोग के अनुसार, समाज कल्याण सेवाओं से तात्पर्य सामाजिक, आर्थिक शारीरिक एवं मानसिक रूप से अशक्त व्यक्तियों तथा समुदाय द्वारा उपलब्ध सुविधाओं से वंचित लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। कल्याणकारी सेवाओं का उद्देश्य

समुदाय के निःशक्त तथा वंचित वर्गों को सामान्य समुदाय के निकट तक यथा संभव पहुँचाने का है।

समाज कल्याण नियोजन पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा विभिन्न देशों के लिए क्षेत्र एवं क्रियान्वयन पर विचारोपरान्त समाज कल्याण की निम्नलिखित रूप से परिभाषा दिया है'

नियोजन कार्य हेतु समाज कल्याण के क्षेत्र को संगठित गतिविधियों के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका मूल उद्देश्य व्यक्तियों, समूहों, एवं समुदायों को अपनी स्थिति को उन्नत करने, परिवर्तनशील अवस्थाओं के साथ सामंजस्य स्थापित करने तथा विकास योजनाओं में भाग लेने योग्य बनाना है। मानव सम्बन्ध एवं शिक्षा औपचारिक जिसमें विशेष कौशल की आवश्यकता है, व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं औपचारिक शिक्षा हेतु उपलब्ध मूल सुविधाओं तथा स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धि कराने वाले विशेष गतिविधियों को संचालित किया जाता है। कुछ समाज कल्याण गतिविधियाँ सम्बंधित क्षेत्रों के नियोजन उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होती हैं, कुछ का उद्देश्य स्थानीय नागरिकों की स्वयं सहायक सेवी परियोजनाओं मेंभाग लेने के लिए सक्षम बनाना एवं सामाजिक वातावरण उपस्थित करने में सहायता करता है। कुछ समाज कल्याण सेवाएँ विशिष्ट श्रेणियों तथा लक्ष्य समूहों को प्रत्यक्ष रूप से सहायता प्रदान करता है जिससे कि वे सम्मानित सीमा तक न्यूनतम सामाजिक स्तर पा सके। भारत में समाज कल्याण सीमित अर्थों में प्रयुक्त होता है, यथा सामाजिक रूप से अक्षम वर्गों अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अनाथों, विधवाओं, अविवाहित माताओं, नैतिक दृष्टि हेय महिलाओं, वृद्धों एवं आशक्त महिलाओं एवं बच्चों, शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों, भिखारियों, वेश्याओं, अपराधियों, शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांग बीमार, मानसिक रोगी, आर्थिक रूप से कमजोर, बेरोजगार एवं निराश्रित व्यक्तियों के लिए समाज कल्याण सेवाओं की व्यवस्था तथा उनकी स्थिति को ऊँचा करना है।

समाज कल्याण की योजनाओं का निर्माण : भारत एक कल्याणकारी राज्य है। किसी समूह, व्यक्ति एवं समाज को विशेष आवश्यकताओं के प्रति जागरूक करना तथा उसके समाधान के लिए सक्षम बनाना समाज कल्याण कहलाता है। सर बेवरिज (William Beveridge) ने समाज में प्रत्येक नागरिक को निम्नलिखित पांच दानवों से सुरक्षा प्रदान करने की बात किया है।

1– अभाव (Want)

2– अज्ञान (Ignorance)

3. देरोजगारी (Unemployment)

4. बीमारी (Disese)

5. गन्दगी (Sqvalous)

इन दानवों से लड़ने का काम 'समाज कल्याण' के अन्तर्गत किया जाता है। भारतीय संविधान के लागू होने के बाद 1950 में भारत में योजना आयोग का गठन किया

गया। कल्याणकारी कार्यों से सम्बन्धित योजनाओं के निर्माण की जिम्मेदारी योजना आयोग को दिया गया। इस देश के विकास हेतु संशाधनों की व्यवस्था योजनाओं का निर्माण और इसका क्रियान्वयन योजना आयोग के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। भारतीय योजना आयोग ने आरम्भ से ही पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विकास एवं कल्याणकारी कार्यों का संचालन आरम्भ किया । प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में अर्थव्यवस्था के विकास और समाज कल्याण के लिए संशाधनों का आवंटन किया जाता है और उसी के अनुरूप कार्यक्रमों का निर्धारण किया जाता है। समाज कल्याण के लिए योजना आयोग ने विभिन्न भागों एवं प्रभागों का प्राविधान किया है। जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, पोषाहार, पिछड़ा वर्ग, आवास, नगरीय विकास, जल आपूर्ति, ग्रामीण विकास ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग आदि आते हैं। ये विभाग एवं प्रभाग अपने–अपने विषयों से सम्बंधित नीतियों का निर्धारण करते हैं तथा कार्यक्रम बनाते हैं। नीतियों और कार्यक्रमों का निर्धारण में सम्बंधित विभागों के विशेषज्ञों, कार्यदलों, अध्ययन टीमें और अनुसंधान संस्थाओं से परामर्श किया जाता है। विभिन्न हित समूहों के प्रतिनिधियों से विचार विमर्श किया जाता है।

समाज कल्याण से सम्बंधित सभी विषयों के लिए अलग से मंत्रालयों की स्थापना भी की गयी है। मानव संशाधन मंत्रालय के अन्तर्गत शिक्षा महिला एवं बाल कल्याण, पोषाहार आदि आते हैं जिनका सम्बन्ध सीधे समाज कल्याण से है। अब तक भारत में 11 पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण एवं कार्यक्रम संचालित हो चुके हैं। इस समय बारहवीं पंचवर्षीय योजना चल रही हैं। यहाँ हम कुछ पंचवर्षीय योजनाओं की चर्चा कर सकते हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (First Five Year Plan 1951-56) प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह स्वीकार किया गया है कि, सामाजिक कल्याण के उद्देश्य सामाजिक स्वास्थ्य की प्राप्ति है जिसमें समुचित जीवन स्तर सामाजिक न्याय का आश्वासन, व्यक्तिगत एवं समूह की अभिव्यक्ति के माध्यम से सांस्कृतिक विकास हेतु अवसर एवं सामाजिक समन्वय की ओर ले जाने वाले मानवीय सम्बन्धों के सामंजस्य के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। इस योजना में महिलाओं, बच्चों, युवाओं, परिवारों वंचित समूहों के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं विकलांगों के कल्याण के लिए नीतियों एवं कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दिया गया।

अल्प वित्तीय प्राविधानों एवं प्रशासकीय संरचना की कमी के कारण इस क्षेत्र में विकास की गति धीमी रही। आरम्भ से ही इस योजना में जन सहभागिता के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं की आवश्यकता की अनुभूति की गयी। 1953 में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना के साथ स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग लिया जाने लगा। प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाज कल्याण के सम्बन्ध में यह बहुत प्रभावशाली योजना रही, पंडित जवाहर लाल नेहरू ने इस बोर्ड के सम्बन्ध में कहा, समाज कल्याण कार्यों को प्रोत्साहित करने के लिए जो प्रयास हम कर रहे हैं वह अतुलनीय है। यह कोई केन्द्रीय शक्ति नहीं है जो इसे कर रही है और न यह भार स्थानीय समाज कल्याण संस्थाओं पर दिया गया है यह इन दोनों का सामूहिक प्रयास है जहाँ केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड सहायक और निर्देशक के रूप में है तथा साथ ही स्थानीय समाज कल्याण संगठन इस कार्य को करते हैं। जोकि इस कार्य को करने के लिए सर्वथा उपयुक्त है। इस तरह से हम समूचे देश के लोगों की एक बड़ी जनसंख्या की शक्ति उत्साह एवं पहल का उपभोग कर सकते हैं। 1956 में राज्यों में राज्य समाज कल्याण सलाहकार बोर्डों की स्थापना की गयी जो केन्द्रीय बोर्ड के दायित्वों का निर्वाह करते हैं ।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (Thid Five Year Plan 1961-66) में समाज कल्याण से सम्बंधित सभी विषयों का सम्मिलित किया गया। इस अवधि में महिला एवं बाल विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। इसी अवधि में केन्द्र में समाज कल्याण मंत्रालय की (1964) स्थापना हुई जिसे कल्याणकारी सेवाओं को प्रायोजित करने क्रियान्वित करने एवं उन्नत कराने के लिए प्रशासकीय ढांचे की व्यवस्था की गयी।

सम्बन्धित क्षेत्रों के लिए नीति एवं नियोजन (Related Areas of Policy and Planning) :–

समाज कल्याण का लाभार्थी एक ऐसा वर्ग है जो शासकीय दैवीय एवं सामाजिक उपेक्षा का शिकार रहा है। उपेक्षा के शिकार वर्गों में सर्वप्रथम दे आते हैं जिन्हें अस्पृश्यता अछूत कहा जाता रहा है। निश्चित रूप से यह सामाजिक ढांचे के अन्तिम व्यक्ति (Last Man) हैं जो काम तो अधिक करते हैं किन्तु संशाधनों के अभाव एवं अन्य कारणों से पिछड़े हैं। महात्मा गांधी ने इस अन्तिम व्यक्ति को हरिजन कहा। 1935 में इस वर्ग को अनुसूचित जाति की संज्ञा दी गयी। अप्रैल 1936 में ब्रिटिश सरकार ने कुछ जातियों, वंशो और कवीलों की सूची बनाया जिसे अनुसूचित जाति कहा गया।

भारतीय संविधान की धारा 341 में कुछ पिछड़े वर्गों, समुदायों को जो अस्पृश्य और सामाजिक अयोग्यता के शिकार थे, उन्हें अनुसूचित जाति का दर्जा दिया गया। राजनैतिक दबावों और सामाजिक आन्दोलनों के कारण इन जातियों की संख्या में वृद्धि हुई है। अब तक लगभग 100 जातियाँ अनुसूचित जाति की श्रेणी में आ चुकी है।

1981 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या का 15.47 प्रतिशत अनुसूचित जाति की श्रेणी में आता है। अनुसूचित जातियों की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करते हैं। औद्योगिक प्रगति, कृषि विकास तथा जजमानी प्रथा के अन्त हो जाने के कारण अनुसूचित जातियों का मनोबल बढ़ा है और उनमें गतिशीलता बढ़ी है। अनुसूचित जातियाँ जो अंग्रेजों के समय में अति पिछड़ी हो गयी क्योंकि उनके परम्परागत व्यवसाय बन्द हो गये। आजदी देश के पश्चिमी भाग में अनुसूचित जाति बुनकर का काम करते हैं। नगरीय क्षेत्रों में रिक्शा चालक, ठेला चालक, निर्माण श्रमिक, बीड़ी मजदूर, सफाईकर्मी आदि असंगठित मजदूरों में अधिकांश अनुसूचित जातियों से आते हैं।

संवैधानिक सुरक्षा (Constitutinal Safeguard) :–

1. अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता का उन्मूलन एवं किसी भी रूप में इसके उपयोग पर रोक।

2. उनके आर्थिक और शैक्षिक हितों के विकास तथा सामाजिक अन्याय एवं शोषण के सभी रूपों से उनकी सुरक्षा (धारा 46)।

3. हिन्दुओं के सभी सार्वजनिक संस्थाओं को हिन्दुओं के सभी वर्गों के लिए खोल देना।

4. दूकानों, भोजनालयों, सार्वजनिक मनोरंजन स्थलों, कुंआ तालाबों, घाटों सड़कों एवं सार्वजनिक विश्राम स्थलों जो पूर्ण आंशिक रूप से राज्य कोष से सहायता प्राप्त करते हैं

उसमें सभी प्रकार के प्रयोग के सम्बंध में अयोग्यता बाधा अथवा शर्त की समाप्ति। धारा (15 (2))

5. राज्य द्वारा चलाए जाने वाले या राज्यकोष से सहायतित शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश वर्जित नही किए जा सकते।

6. लोक सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व होने की स्थिति में सुरक्षित स्थान देने की स्वीकृति देना । (धारा 16 एवं 335)

7. लोक सभा एवं विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिये स्थान सुरक्षित करना। (धारा 330, 332 एवं 334)

8. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जाति के कल्याण के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति तथा राज्यों में अलग विभागों एवं परिषदों की स्थापना करना (धारा 164, 330 एवं पांचवीं सूची)

9. अनुसूचित जातियों एवं जनजातीय क्षेत्रों में नियंत्रण एवं प्रशासन हेतु व्यवस्था करना (धारा 224 एवं जनजातीय पांचवीं तथा छठी सूचियाँ)

10. मानव व्यापार एवं बंधुआ काम पर प्रतिबंध (धारा 23)।

<u>विधान मण्डल में प्रतिनिधित्व (Representation in Legislature)</u> – संविधान की धारा 330 एवं 332 के माध्यम से लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उनकी जनसंख्या के अनुसार सीटों को सुरक्षित रखा गया। ये सुरक्षित सीट कहलाते हैं। यह सुरक्षा संविधान के प्रारम्भ में 10 वर्षों तक के लिए किया गया था जो अद्यतन लाए हैं। किन्तु आज 21वीं सदी में भी यह सुरक्षा बनी हुई है। राज्यसभा और विधान परिषद में ऐसा कोई आरक्षण प्राप्त नहीं है, पंचायती राज की स्थापना के बाद पंचायतों तथा अन्य स्थानीय निकायों में सीटें सुरक्षित की गयी है।

<u>सेवाओं में आरक्षण (Reslrvation in Services)</u> :–

संविधान की धारा 235 के अनुसार केन्द्रीय एवं राज्य स्तरीय सरकारी विभागों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण किया गया है। धारा 16 (4) के अनुसार पिछड़े वर्गों को सेवाओं में आरक्षण देने की बात कही गयी है। अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत स्थान आरक्षित है जो खुली प्रतियोगिता द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर भर्ती की जाती है। अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत सीटें आरक्षित हैं। वरिष्ठता के आधार पर पदोन्नति में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों को वर्ग A, B, C, Dके पदों पर की व्यवस्था की गयी है।

आरक्षण इनके प्रतिनिधित्व के लिए आयु सीमा, उपयुक्ता, योग्यता, अनुभव आदि में भी छूट प्रदान किया गया है। संघलोक सेवा आयोग द्वारा विज्ञापनों में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जातियों के आरक्षण से सम्बंधित विज्ञापन होते हैं यदि इस आरक्षित वर्ग के उम्मीदवार नही मिल पाते हैं तो इसका दुबारा विज्ञापन दिया जाता है। दूसरे विज्ञापन के बाद यदि आरक्षित वर्ग का उम्मीदवार नहीं मिलता है तो दूसरे उम्मीदवारों पर भी विचार

किया जा सकता है। आरक्षण की इस प्रणाली का सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों में भी अनुसरण किया जाता है। स्वयं सेवी अभिकरणों जो सरकार द्वारा सहायता प्राप्त हैं को भी आरक्षण कुछ शर्तों के साथ देना होता है । अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के आरक्षण के सम्बन्ध में भर्ती प्राधिकरणों द्वारा वार्षिक समीक्षा की जाती है। इसके लिए विभिन्न मंत्रालयों में ताल–मेल अधिकारी नियुक्त किये गये हैं। राज्य सरकार भी इन आरक्षण नियमों कापालन करती हैं।

<u>अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग</u> **(Scheduled caste and Scheduled Tribe Commission)** :–

संविधान के अनुच्छेद 338 में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए अधिकारी की नियुक्ति की बात की गयी है। उसका कार्य संविधान द्वारा प्रदत्त इन जातियों को दिए गए सुविधाओं की जाँच करना है। वह इस तरह की जाँच कर राष्ट्रपति को निर्धारित समय पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। इस अनुच्छेद के अनुपालन में राष्ट्रपति द्वारा एवं विशेष अधिकारी की नियुक्ति की जाती है जिसे अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जाति आयुक्त कहा जाता है। समस्या की विशालता को देखते हुए सरकार ने एक उच्च स्तरीय आयोग की स्थापना किया जिसमें सार्वजनिक जीवन के ख्याति प्राप्त लोगों को सदस्य बनाया गया। यह ध्यान रखा गया है कि आयुक्त के अधिकारों में आयोग द्वारा किसी भी प्रकार की कटौती नहीं की जाएगी।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 338 के अनुसार इस आयोग में चार सदस्य होंगे तथा इसे निम्नलिखित विशेष अधिकार प्राप्त होंगे–

1. संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण के अनुपालन की विधि की समीक्षा करना सार्वजनिक सेवाओं, प्रदत्त आरक्षण के अनुपालन की विधि की समीक्षा करना।

2. अस्पृश्यता एवं भेदभाव के उन्मूलन के लिए नागरिक अधिकार कानून 1955 की समीक्षा करना।

3. सामाजिक और आर्थिक एवं अन्य प्रासंगिक परिस्थितियों का पता लगाना, जिनके कारण अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विरुद्ध अपराध होते हैं। इसकी जांच पड़ताल कर कानूनी बाधाओं को दूर करने तथा अपराधों को रोकने के लिए उपचारात्मक उपायों की अनुशंसा करना।

4. अनुसूचित जाति अथवा जनजाति के किसी सदस्य को प्रदत्त किसी सुरक्षा से वंचित करने के सम्बन्ध में व्यक्तिगत शिकायत की पूछताछ करना।

भारत सरकार, राज्य सरकार एवं संघ प्रदेशों के प्रशासनों से आयोग में पूर्ण सहायता की अपेक्षा की गयी है। आयोग अपने कार्य प्रक्रिया का निर्धारण स्वयं प्रस्तुत करेगा। सभी मंत्रालय एवं विभाग आयोग द्वारा वांछित सूचना एवं प्रलेख करेंगे।

आयोग अपने क्रिया कलाप एवं अनुशंसा सहित वार्षिक रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करेगा, आयोग चाहे तो किसी भी समय अपने कार्यक्षेत्र से संबंधित किसी विशेष मामले में

अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर सकता है। सरकार इस वार्षिक रिपोर्ट के सिफारिशों को अस्वीकृत न करने के कारणों की व्याख्या कर संसद के दोनों सदनों के पटल पर रखेगी।

आयोग की स्थापना 1978 में हुई। अब इसे राष्ट्रीय जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग कहा जात है। इस आयोग के द्वारा इन जातियों के विकास स्तरों एवं नीति के मामले में परामर्श देने का अधिकार है इसमें अध्यक्ष और 11 सदस्य होगें जिनमें समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाज कार्य एवं अन्य सामाजिक विषयों के विशेषज्ञों को सम्मिलित किया जाता है। राष्ट्रीय आयोग के कार्य निम्नलिखित है–

1. अस्पृश्यता की सीमा एवं उसके प्रभावों तथा इसके कारण उत्पन्न होने वाले सामाजिक भेदभाव का अध्ययन करना तथा उसके उपयों की अनुशंसा करना।

2. इस जाति के व्यक्तियों के प्रति हो रहे अपराधों के सामाजिक एवं आर्थिक एवं अन्य परिस्थितियों का अध्ययन करना तथा इसकी जांच हेतु उपयुक्त उपचारात्मक उपायों को सुझाना।

3. राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के लिए अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के विकास को विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करना।

4. इन जातियों के विकास के लिए सामान्य नीतियों का विकास करना तथा केन्द्र सरकार द्वारा दिए गए अन्य कार्यों को सम्पादित करना।

केन्द्रीय प्रायोजित परियोजनाएँ (Cetrally Sponsored Schemes)

1. **अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों के लिए मैट्रिक उपरान्त छात्रवृत्तियाँ** : हाईस्कूल के ऊपर अध्ययन के लिए इन जातियों के बच्चों के अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति का प्राविधान किया गया है। सभी पात्र अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों को किसी मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्था में प्रवेश के बाद छात्रवृत्ति की व्यवस्था की गयी है।

2. **गन्दे व्यवसायों में कार्यरत व्यक्तियों के बच्चों को मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्तियाँ** : गन्दे व्यवसायों जैसे चर्म परिशोधन, सफाई चमड़ा उतारना तथा परम्परागत मेहतरों के बच्चों को अलग छात्रावास में रखकर शिक्षा देने का प्राविधान शुरू किया गया।

3. **अनुसूचित जाति की छात्राओं के लिए छात्रावास** : केन्द्र सरकार द्वारा शिक्षा ग्रहण करने वाली छात्राओं के लिए अलग छात्रवृत्ति की व्यवस्था की गयी है । इसके केन्द्र सरकार राज्यों या संघ शासित प्रदेशों को अनुदान प्रदान करती है जिसमें कुछ हिस्सा राज्य सरकारों को भी मिलाना होता है। राज्य सरकारों द्वारा स्वयंसेवी संस्थानों को भी ऐसे छात्रावास निर्माण के लिए अनुदान का प्राविधान हैं।

4. अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों हेतु विशेष शिक्षा परियोजना–केन्द्र सरकार एवं सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में विभिन्न पदों एवं सेवाओं में इन जातियों के प्रतिनिधित्व को बढ़ाने में प्रोत्साहन देने के लिए कल्याण मंत्रालय ने विशेष शिक्षा परियोजना का आरम्भ किया है, इस परियोजना के अन्तर्गत विभिन्न पदों पर

नियुक्तियों के लिए प्रतियोगी परिक्षाओं के लिए पूर्ण प्रशिक्षण या कोचिंग की व्यवस्था की गयी है। इस समय इस तरह के अनेक केन्द्र चलाए जा रहे हैं।

5. **<u>अनुसूचित जाति विकास समिति</u>** – इस निगम द्वारा अनुसूचित जाति के स्वरोजगार के प्रोत्साहन के लिए ऋण और अनुदान की व्यवस्था की गयी है। इस निगम के माध्यम से अनुसूचित जाति के उन लोगों को सहायता प्रदान की जाती है जो उद्योग लगाना या व्यापार करना चाहते हैं।

6. **<u>अनुसूचित जातियों के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं को सहायता</u>** –अनुसूचित जातियों के सामाजिक और आर्थिक कल्याण एवं विकास के लिए स्वयं सेवी संस्थाओं को अनुदान का प्राविधान किया गया है।

7. **<u>राष्ट्रीय अधिकार संरक्षण कानून 1955 (Protection of Civil Rights Act 1955)</u>** – भारत सरकार इस कानून के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सशक्त प्रशासकीय मशीनरी के प्राविधान करने के लिए राज्यों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है। इसके साथ ही परम्परागत शुष्क शौचालयों को जल वाले शौचालयों में बदलने का प्रोत्साहन देती है। जिससे कि मेहतरों को विमुक्त किया जा सके तथा उनके लिए अन्य व्यवसाय में पुनर्वास की व्यवस्था का भी प्राविधान किया गया है।

<u>अनुसूचित जनजाति कल्याण (Welfare of Scheduled Tribes)</u>

भारतीय संविधान लागू होने के पूर्व अनुसूचित जनजाति को आदिम जाति पिछड़ी जनजाति आदि शब्दों से सम्बोधित किया जाता था। इनकी कोई एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। डॉ. डी.एन. मजूमदार ने आदिम जातियों के विशिष्ट व्यवस्थाओं के अनुरूप एक परिभाषा दिया है, प्रादेशिक सम्बद्धता, अन्तर्विवाही कार्य विशिष्टीकरण का अभाव, जनजातीय अधिकारियों द्वारा प्रशासकीय वंशानुगत तथा अन्य, भाषा तथा बोली में जुड़े हुए, दूसरी जातियों या जनजातियों से दूर, जातीय संरचना में बेदाग, जनजातीय परम्पराओं, रीतियों एवं विश्वासों को अनुसरण करने वाला, विदेशी स्रोतों से विचार ग्रहण करने में अनुदार तथा इन सबसे ऊपर वंशीय समरूपता एवं प्रादेशिक एकीकरण के प्रति जागरूक सामाजिक समूह है।

<u>जनजातीय कल्याण हेतु संवैधानिक व्यवस्थाएँ</u> (Constitutional Provision for Tribal Welfare) –भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए विभिन्न सुरक्षाओं की व्यवस्था की गयी है। संविधान के अनुच्छेद 19, 46. 244, 275,330, 332, 334, 338, 342 एवं 349 के माध्यम से जनजातियों के कल्याण, सुरक्षा और विकास के लिए बहुत से संरक्षण प्राप्त है। केवल केन्द्रीय व्यवस्था ही नहीं अपितु राज्य सरकारों के सही परामर्श से उनके शीघ्र और सम्यक विकास के लिए अन्य प्रकार के संरक्षण की आवश्यकता पड़ती है।

<u>बीस सूत्रीय कार्यक्रम (Twenty Point Program)</u>

1986 में लागू बीस सूत्रीय कार्यक्रमों से अनुसूचित जनजाति के कल्याण के लिए विशेष प्राविधान किए गए हैं। कल्याण मंत्रालय को जनजातीय विकास के लिए उत्तरदायित्व प्रदान किया गया तथा उनके विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के नियोजन, एवं समन्वयन के

लिए नीति निर्धारण का दायित्व इसे दिया गया । केन्द्रीय मंत्रालय बीस सूत्रीय कार्यक्रमों में निम्नलिखित जनजातियों से सम्बंधित विन्दुओं के लिए उत्तरदायी माना गया–

1. विन्दु 11 अनुसूचित जातियाँ एवं जनजातियों को न्याय।

2. 7 (3) 1 अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए शुद्ध पेयजल की व्यवस्था।

3. विन्दु 14 (5) अनुसूचित जातियों जनजातियों के लिए आवास निर्माण।

4. विन्दु 16 (2) जनजातीय जनसंख्या एवं स्थानीय समुदायों के वन उत्पाद एवं ईंधन हेतु लकड़ी प्राप्त करने के परम्परागत अधिकार का संरक्षणं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व जनजातियों को समाज के अन्य लोगों से अलग–थलग रखने एवं कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखना था। ईसाई धर्म प्रचारकों के अतिरिक्त अन्य बाहरी व्यक्तियों को इन क्षेत्रों में जाने की अनुमति नहीं थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उनके जीवन स्तर को ऊँचा करना, कृषि एवं उद्योगों को बढ़ावा देने तथा उनके शैक्षणिक, सामाजिक एवं आर्थिक विकास को बढ़ावा देने का कार्य आरम्भ हुआ। जनजाति समाज मे अति पिछड़े लोगों में है जो किसी भी आधुनिक विचारों को स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं इसीलिए यह निश्चित किया गया है कि कोई भी विकास कार्यक्रम लाभार्थियों के जीवनशैली के अनुरूप होना चाहिए। दूसरी बात यह है कि जनजातीय समुदाय मनोवैज्ञानिक रूप से उसे स्वीकार करने में समर्थ हो, कार्यक्रमों के मूलतत्वों के प्रति उनकी अनभिज्ञता एवं स्वीकार करने की अयोग्यता के कारण किसी भी कार्यक्रम को सफल होने में संदेह रहता है। इसीलिए उनके लिए निर्धारित होने वाले कार्यक्रमों में जागरूकता और शिक्षा का महत्व अधिक है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में यह स्वीकार किया गया है, षविकास के नाम पर इन कार्यक्रमों को भी प्रशासित करना मूल होगी। विकास को सुगम बनाने हेतु जनजातीय लोगों को बाहरी दबाव तथा आदेश के बिना उन्हें स्वयं अपनी प्रतिभा के अनुसार परम्परागत संस्कृति एवं कला के प्रति सम्मान एवं समर्थन के साथ विकास करने में सक्षम बनना चाहिए। जनजातीय क्षेत्रों में विकास और प्रशासन के लिए स्थानीय कार्यक्रमों को ही सरकारी कर्मचारी एवं सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में तैयार एवं प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

<u>जनजातीय विकास एवं कल्याण रणनीति</u> (Tribal Development and welfare Strategy)

अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए दो दिशाएँ निर्धारित की गयी हैं।

1. उनके हितों की वृद्धि एवं संरक्षण के लिए प्रशासकीय एवं कानूनी व्यवस्था।

2. उनके बेहतर जीवन स्तर के लिए विभिन्न विकास कार्यक्रमों का संचालन।

<u>जनजातियों के विकास के उद्देश्य (Objectives of Tribal Development)</u> :–

1. कृषि, वागवानी, पशुपालन तथा लघु उद्योगों की व्यवस्था कर जनजातियों के जीवन स्तर में सुधार लाना।

2. भूमि, बन्धुवा मजदूरी, बन, ऋण प्रदान करने आदि क्षेत्रों में शोषण की समाप्ति।

3. शैक्षणिक एवं प्रशिक्षणात्मक कार्यक्रमों द्वारा मान व संशाधन विकास।

4. क्षेत्रों के आधार संरचना का विकास।

जनजातीय विकास कार्यक्रमों के लिए निधि व्यवस्था (Funding of Tribal Development Programs) –जनजातीय विकास योजनाओं को वित्तीय संशाधन के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित चार साधन हैं–

1. **राज्य योजना** में राज्य द्वारा विभिन्न कार्य क्षेत्रों के लिए आवंटित राशि तथा केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों के लिए आवंटित अंशदान सम्मिलित है। छठी पंचवर्षीय योजना में दंड प्राविधान किया गया है कि राज्य सरकारें परिव्यय की कुछ धनराशि जनजातीय कल्याण के लिए अलग रखे। इसके निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा गया। (क) राज्य के कुछ भूक्षेत्र में जनजातीय क्षेत्र का अनुपात (ख) राज्य के अन्य क्षेत्रों के विकास की तुलना में जनजातीय क्षेत्र के विकास का ध्यान रखना।

2. **विशेष केन्द्रीय सहायता** : पांचवी पंचवर्षीय योजना में राज्य सरकारों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं के द्वारा प्रदान किए गए वित्तीय सहायता में वृद्धि करना एवं प्रेरक का कार्य करना था। केन्द्र सरकार द्वारा कुछ मदों में शत–प्रतिशत व्यय वहन किया जाता है। कुछ परियोजनाओं के लिए केन्द्र और राज्य 50–50 के अनुपात में व्यय वहन करते हैं। इन कार्यक्रमों में गरीबी उन्मूलन की ही अनेक परियोजनाएँ हैं।

3. छवीं पंचर्षीय योजना काल में कार्यबल की रिपोर्ट के आधार पर कहा गया कि लक्ष्य समूह की विशिष्ट समस्याओं के आधार पर ही कार्यक्रमों का निर्धारण किया जाना चाहिए। जनजातीय परिवारों को प्रत्यक्ष लाभ देने वाले कार्यक्रमों पर उच्च प्राथमिकता दी जाती है। संस्थागत वित की व्यवस्था की गयी है। जिससे आदिवासी परिवारों को ऋणों पर 50 प्रतिशत अनुदान की व्यवस्था है।

अनुसूचित जनजाति हेतु केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रम (Centrally sponsored Schemes for Scheduled Tribes) :–

1. **कन्या छात्रावास (Girls Hostels)** : जनजातीय समुदाय में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए तृतीय पंचवर्षीय योजना में जनजातीय छात्राओं के लिए कन्या छात्रावास की व्यवस्था की गयी है। इस मद में केन्द्र और राज्य 50–50 के अनुपात में व्यय वहन करते हैं।

2. **अनुसंधान एवं प्रशिक्षण** : केन्द्रीय प्रायोजित परियोजनाओं के अन्तर्गत देश में कई अनुसंधान केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इन संस्थानों द्वारा जनजातीय समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। यहाँ अनुसंधान, मूल्यांकन, सांख्यिकीय आंकड़ों का संकलन, प्रशिक्षण तथा जनजातीय योजनाओं के निर्माण में सहयोग आदि का कार्य किया जाता है।

3. **स्वयंसेवी संगठनों को सहायता अनुदान (Erant in- aid to Voluntary organisatins)** : अखिल भारतीय स्तर के स्वयंसेवी संगठनों को अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए अनुदान प्रदान किया जाता है, जिससे कि केन्द्रीय एवं राज्य सरकार की

योजनाओं का सफल संचालन हो सकें। शिक्षा, प्रशिक्षण, चिकित्सा एवं जनस्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में कार्य के लिए इस प्रकार के अनुदान प्रदानं किए जाते हैं।

कार्यक्रमों का प्रभाव (Impact of Programs)

केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा प्रयासों के बाद भी कहा जाता है कि जनजातीय समुदाय को अपेक्षित लाभ नहीं हुआ। अनुसूचित जाति एवं जनजातीय आयुक्त ने अपनी 28वीं रिपोर्ट में दुःख व्यक्त किया है कि भारतीय संविधान में वर्णित जीवन का अधिकार तथा मौलिक अधिकार हमारे जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना है एवं सबसे बड़ी हानि उठाने वाले अनुसूचित जनजाति एवं जनजाति के लोग जिनका संरक्षण संविधान के अन्तर्गत सरकार का दायित्व है। विभिन्न राज्यों में सरकार नौकरशाही के भूल–भुलैया में फंसी रही है। भूमि सुधार न के बराबर हुआ है और अनेक राज्यों में जनजातीय लोग बंधुआ मजदूर बनने के लिए बाध्य हुए हैं। आयुक्त के शब्दों में, ''बंधुआ मजदूर अधिनियमके अन्तर्गत कानून का उलंघन करने वालों पर कोई कार्यवाही नही होती है। बंधुआ मजदूरों को केवल छुड़ा लिया जाता है। नियोक्ता पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।'' बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। नियोक्ता एवं अधिकारियों के बीच पुर्नवास के धन का बंदरबांट कर लिया जाता है। जनजातीय समाज आज भी भूस्वामियों एवं महाजनों का गुलाम है। उसकी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। काफी समय से चले आ रहे वनों के अधिकार से वे वंचित हैं। बांधो और सड़कों के कारण विस्थापन हुआ है और वे अपनी भूमि को खो बैठा है। उनके ऊपर आये दिन घातक आक्रमण होते रहते हैं। नक्सलवादी आन्दोलनों एवं पुलिस दोनों के भय के कारण जनजातीय समाज पीस रहा है। कुछ जनजातियों ने नक्सलियों द्वारा प्रायोजित अलगाववाद का पूर्ण समर्थन किया है।

बाल कल्याण (Child Welfare)

बच्चे राष्ट्रीय सम्पत्ति से अलग एक विश्व की कल्पना को साकार करने वाले हैं। उन्हें राष्ट्रीयता, जाति, वर्ग से कोई मतलब नही है। पंडित जवाहरलाल के शब्दों में सारे संसार के बच्चे एक हैं राष्ट्रीयता की व्यवस्था से अलग वे संसार की एकता के प्रतीक बन सकते हैं। किसी भी राष्ट्र को अपनी क्षमताओं को बोध बच्चे कराते हैं तथा उसकी परीक्षा इस बात से होती है कि उसने उनके लिए क्या किया है। ष्जेम्स ग्राम के कहते हैं, ष बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास हमारी सभ्यता के सामाजिक और आर्थिक विकास में सभी निवेशों से अधिक महत्वपूर्ण है।

भारतीय आबादी में बच्चों की संख्या लगभग 40 प्रतिशत है। जिनमें 50 प्रतिशत से अधिक बच्चे कुपोषण का शिकार है। भारत के बाल मृत्युदर अधिक है विटामिन ए की कमी के कारण काफी संख्या में बच्चे अंधत्व का शिकार हो जाते हैं। बाल श्रम, बाल अपराध, बाल भिक्षावृत्ति एवं दत्तक बच्चों की समस्या भारत में गम्भीर रूप ले चुकी है। ये बच्चे शोषण का शिकार हैं बालिकाओं को यहाँ अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। भ्रूण हत्या, कुपोषण और बीमारी का शिकार अधिकार है। बालिकाएँ होती है। संसार के अन्य हिस्सों में भी बच्चों की स्थिति ठीक नहीं है। बच्चे शोषण का शिकार हैं।

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (United Nations Children COM Fund)

1946 में इस कोष की स्थापना बच्चों के प्रति चिन्ता के कारण हुई। 1953 में इसे यूनिसेफ (UNICEF) का नाम दिया गया जो सारे विश्व में बाल कल्याण के सम्बन्ध में कार्य करता है। इस कोष से विश्व में लाखों बच्चे लाभान्वित हुए हैं और हो रहे हैं। इस संस्था को नोबल पुरस्कार और इन्दिरा गांधी शान्ति पुरस्कार नवाजा जा चुका है। यह पूरे राष्ट्र के लिए देवदूत के रूप में कार्य करती है। इसका कार्य है बच्चों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाना तथा बाल मृत्युदर को करना। भारत में इस संस्था की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है जिसने बच्चों के कल्याण और विकास कार्यों के लिए सहायता प्रदान किया है। यूनिसेफ की कार्य योजना में शिशु मृत्युदर में कमी, मातृ मृत्युदर में कमी, कुपोषण को समाप्त करना, स्वच्छ पेयजल एवं स्वच्छता का प्रबन्ध प्रारम्भिक शिक्षा तथा विपदा, युद्ध आदि के समय बच्चों का संरक्षण आदि सम्मिलित है।

भारत में बाल कल्याण संवैधानिक प्रावधान (Child Welfare in India constitutional Provision) :–

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू का बच्चों के प्रति अत्यधिक लगाव था। बच्चों के प्रति विधायी प्रावधानों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में बच्चों के कल्याण पर बहुत जोर दिया गया है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 में यह व्यवस्था की गयी है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी कारखाने, खान या खतरनाक किस्म के स्थानों पर काम पर नहीं लगाया जाएगा। राज्य के नीति निर्देशक तत्वों की धारा 39 में इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है कि आर्थिक आवश्यकता से बाध्य होकर बच्चों को गन्दे खतरनाक कामों में न लगाया जाय। संविधान के धारा 45 के अनुसार सारे बच्चों की निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा का प्राविधान किया जाय।

1974 में राष्ट्रीय बाल नीति को स्वीकार किया गया जिसके अनुसार बच्चों को सबसे महत्वपूर्ण सम्पत्ति माना गया। बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए यह नीति निर्धारित की गयी। नीति के मुख्य रूप से कार्य हैं शारीरिक रूप से विकलांग, भाषात्मक रूप से दुखी, मानसिक रूप से बाधित बच्चों के लिए इलाज, शिक्षा एवं पुर्नवास, कमजोर वर्गों के बच्चों को विशेष सहायता एवं युवा अपराधियों, अनाथों, उपेक्षित एवं शोषित बच्चों को स्वस्थ नागरिक बनाने के लिए सुविधाओं की व्यवस्था की गयी है।

समेकित बालविकास सेवा परियोजना (Integrated Child Decvelopment Services-ICDS) :–

2 अक्टूबर 1975 को समेकित बाल विकास परियोजना का शुभारम्भ हुआ । इसके मुख्य कार्यों में 06 वर्षीय बच्चों के लिए पोषाहार तथा स्वास्थ्य में सुधार वाले सम्यक मानसिक विकास बाल मृत्युदर, रुग्णता, कुपोषण एवं पढ़ाई छोड़ देने की प्रवृत्ति में कमी लाना । इन सारे कार्यों के लिए विभिन्न विभागों से समन्वय स्थापित करना तथा बच्चों के साथ–साथ स्वास्थ्य और पोषाहार सम्बन्धी जवाबदेही देखभाल के लिए पोषाहार तथा माताओं की क्षमता में वृद्धि करना आदि। इस परियोजना के अन्तर्गत 06 वर्ष के बच्चे, दूध

पिलाने वाली माताएँ एवं 15 से 44 वर्ष की माताओं को सम्मिलित किया गया है। पूरक पोषाहार, रोग निवारण, स्वास्थ्य परीक्षण, संदर्भ सेवाएँ तथा 03 से 06 वर्ष के बच्चों के लिए अनौपचारिक शिक्षा तथा महिलाओं को पोषाहार स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना।

यह कार्यक्रम राज्य सरकारों द्वारा संचालित किया जाता है जिसके लिए केन्द्रीय परियोजनाओं के शतप्रतिशत अनुदान की व्यवस्था की गयी है। खाद्य सामग्री को व्यवस्था राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है जिसमें गेहूँ, चावल मुफ्त दिया जाता है। सामान्यतया 1000 की जनसंख्या के लिए एक आंगनबाड़ी आदिवासी एवं पर्वतीय क्षेत्रों के लिए 750 जनसंख्या पर एक आंगनबाड़ी की व्यवस्था का प्राविधान है। आच्छादित गांवों में एक आंगनबाड़ी कार्यकत्री भी नियुक्त होती है। जिसकी देखरेख में प्रत्येक विकासखण्ड में एक मुख्य सेविका की नियुक्ति की जाती है।

यूनिसेफ इस कार्यक्रम को सफल और सुचारू बनाने के लिए परामर्श, प्रशिक्षण, संचार साधनों की आपूर्ति, उपकरण, अनुसंधान और मूल्यांकन का कार्य करता है। कुछ केन्द्रों को केयर (CARE) और विश्व खाद्य कार्यक्रम द्वारा भी सहायता प्रदान किया जाता है।

आई.सी.डी.एस. (ICDS) कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण (Training of ICDS Functionaries) :–

आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं एवं अन्य कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान नई दिल्ली तथा अन्य संस्थान, राज्य सरकारों द्वारा मान्यता प्राप्त स्वंयसेवी संगठन, भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान द्वारा किया जाता हैं। गैर सरकारी संगठन द्वारा आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण कराया जाता है।

बाल कल्याण हेतु अन्य कार्यक्रम (Other Programs of the Welfare of Children)

1. श्रमजीवी और बीमार महिलाओं के लिए शिशुगृह, दिवस देखभाल (Creches) Day care centres for Children of Working and Ailing Women) :– बच्चों की देखभाल के लिए केन्द्रों की स्थापना का प्राविधान किया है यह कार्य स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा संचालित किया जाता है जिसके लिए सहायता मानव संशाधन विकास संस्थान एवं केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड द्वारा किया जाता है। 0–5 वर्ष के बच्चों के लिए दिवस देखभाल सेवाएँ उपलब्ध करायी जाती है। कार्यक्रम के माध्यम से बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल, पूरक पोषाहार, शयन सुविधाएँ, रोग प्रतिरोधक टीके आदि की व्यवस्था स्वंयसेवी संगठन के माध्यम से कराया जाता है। विभिन्न प्रकार की बीमारियों के कारण अस्पतालों में इलाज करा रही महिलाओं, स्थायी रूप से विकलांग महिलाओं या संक्रामक रोगों से पीड़ित महिलाओं तथा श्रमजीवी महिलाएँ जो बच्चों की देखभाल इसलिए नहीं कर पा रही हैं क्योंकि वे अन्यत्र कार्य करती हैं तथाजो व्यावसायिकरूप से चलाए जाने वाले शिशु ग्रहों में अपने बच्चों को भेज आने में असमर्थ हैं आदि बच्चे इस कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाते हैं।

2. प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा (Early Child hood Education) – छठी पंचवर्षीय योजना में पढ़ाई छोड़कर भागनें वाले बच्चों और विद्यालयों के प्रति उन बच्चों को आकर्षित

करने के लिए प्रारम्भिक स्कूल पूर्व शिक्षा का प्राविधान किया गया। स्कूल पूर्व शिक्षा का अर्थ है बच्चों को भाषा, सामाजिक भावात्मक, बौद्धिक और व्यक्तित्व विकास की क्षमता में वृद्धि करना जिससे कि वे प्राइमरी विद्यालयों में शिक्षा के लिए प्रेरित हो सके। केन्द्र सरकार की ओर से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में यह कार्यक्रम चलाने के लिए स्वयंसेवी संगठनों की सहायता का कार्यक्रम निर्धारित किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत बच्चों के लिए पोषाहार, स्वास्थ्य सामाजिक नैतिक और भावात्मक विकास को प्राथमिकता दी गयी है। 1987–80 में यह योजना शिक्षा विभाग से लेकर महिला एवं बाल विकास विभाग को सौंप दिया गया है।

3. राष्ट्रीय बाल कल्याण पुरस्कार (National Award for Child Welfare) :– बच्चों को प्रोत्साहन देने के लिए राष्ट्रीय बाल कल्याण 1979 से लागू है जिसमें कार्यक्रमों और संस्थाओं को पुरस्कार दिया जाता है। इसमें अनेक बार सुधार और परिवर्तन किए गए हैं।

4. संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (UNICEF) –वर्ष 1949 से भारत यूनिसेफ के सहयोग से बच्चों और महिलाओं के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन करता है। भारत इस संस्था के लिए अंशदान करता है और इस अंशदान के बदले यूनिसेफ यहाँ विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन करता है। नई दिल्ली स्थित यूनिसेफ के क्षेत्रीय कार्यालय के लिए प्रशासनिक व्यय को भारत सरकार उठाता है। इस सहायता का उपयोग समोकित बाल विकास सेवा पोषाहार, नगरीय बुनियादी सेवाएँ, शिक्षा, स्वास्थ्य, जलापूर्ति, स्वच्छता जैसे कार्यक्रमों के लिए सहायता प्रदान करता है। इन सेवाओं में माताओं और बच्चों के विकास पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

5. सहायता अनुदान कार्यक्रम (Grant in - aid Program) –उपर्युक्त कार्यक्रम के अतिरिक्त महिला स्वयंसेवी संगठनों को अनुदान प्रदान करता है। इसमें मुख्य रूप से निम्नलिखित कार्यक्रम सम्मिलित हैं–

<u>अनुसंधान एवं मूल्यांकन (Research and Evaluation)</u> :–

(क) महिला एवं बाल विकास हेतु स्वंयसेवी संस्थाओं की संगठनात्मक सहायता।

(ख) सामान्य सहायता अनुदान।

(ग) सूचना एवं जनशिक्षा गतिविधियाँ।

(घ) रेडियो और टेलीविजन।

<u>राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान (National Institute- of Public Cooperation and child Development)</u> – यह महिला एवं बाल विकास विभाग के सहयोग से एक स्वायत्त निकाय है। इस संस्था की स्थापना 1966 में योजना आयोग द्वारा प्रशिक्षण एवं अनुसंधान कार्यों के लिए किया गया था। राष्ट्रीय बाल नीति के निर्माण के बाद इस संस्था के साथ बाल विकास कार्यक्रम भी जोड़ दिया गया। 1975 से इसका नाम राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान रखा गया था। इसके कुछ क्षेत्रीय कार्यालय

भी बनाए गए जिससे कि बाल विकास के क्षेत्र में सुचारू ढंग से कार्य हो सके। इस संस्था के मुख्य कार्य हैं–

1. जन सहयोग एवं बाल विकास सम्बंधी अनुसंधान एवं मूल्यांकन।

2. महिला विकास, बाल विकास, समाज विकास के क्षेत्र में कार्य करने वाली. स्वयं सेवी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण।

3. अभिलेखीकरण और प्रकाशन के माध्यम से महिला विकास से सम्बंधित सूचनाओं का प्रसारण।

4. स्वैच्छिक संस्थाओं से सम्बन्धित नीतियों एवं कार्यक्रमों को बढ़ावा देना एवं सरकारों तथा दूसरी संस्थाओं को परामर्श देना।

5. अनेक अन्तर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एजेंसियों, अनुसंधान संस्थाओं, विश्वविद्यालयों एवं तकनीकी संस्थाओं के साथ सहयोग करना।

(1) प्रशिक्षण (Training) –समोकित बाल विकास परियोजना (ICDS) के अधिकारियों को प्रशिक्षण देने के लिए यह सर्वोच्च संस्था है। इस योजना के सम्बन्ध में शीर्ष स्तर पर प्रशिक्षण संस्थाओं की संरचना को देखता है और उसमें आवश्यक सुधार में सहायक होता है। इनके प्रशिक्षण कार्यक्रमों एवं नियमों का मानकीकरण, संदर्भ ग्रंथों एवं प्रशिक्षण से सम्बंधित सामग्री की प्रति उनका विकास, नियमावली आदि का प्रसार प्रशिक्षक के प्रशिक्षण आदि इसमें सम्मिलित हैं। इसके मुख्य कार्य हैं।

(2) गोष्ठियाँ, सम्मेलन एवं कार्य शालाओं का आयोजन –संस्थान समय–समय पर गोष्ठियों आदि का आयोजन करता है। जिसमें बाल विकास, बाल मृत्युदर कम करने कुपोषण और पोषाहार सम्बंधी विषय पर विचार होता है। कार्यशालाओं के माध्यम से लोगों के विचारों को जानने का प्रयास होता है।

(3) अनुसंधान, मानिटरिंग एवं मूल्यांकन – आई.सी.डी.एस. कार्यक्रम को सशक्त बनाने के लिए तथा उससे सम्बंधित प्रशिक्षण कार्यक्रमों से सम्बंधित अनुसंधान कार्यो को करता है। श्रमजीवी महिलाओं एवं प्रारम्भिक बाल शिक्षा आदि पर अनुसंधान किया गया है। इस संस्था द्वारा विद्यालयों, सामाजिक संगठनों आदि द्वारा आयोजित बाल विकास प्रशिक्षणों की मानिटरिंग और मूल्यांकन किया जाता है।

(4) प्रदर्शन एवं अभिलेखीकरण सेवाएँ – अनुसंधान एवं प्रशिक्षण के अतिरिक्त संस्थान द्वारा प्रदर्शन कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते हैं। इसके लिए संस्थान ने बाल गार्गदर्शन केन्द्र, बाल देखभाल केन्द्र एवं पोषण केन्द्र आदि की स्थापना किया है।

(5) नियोजन –संस्थान द्वारा सम्भावित बाल विकास कार्यक्रमों एवं बाल सेवाओं के लिए योजना, अनुमानित लक्ष्य एवं संशाधनों की उपलब्धता के सम्बन्ध में भी कार्य किया जाता है।

(6) परामर्श – राज्य सरकारों अन्य एजेंसियों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को बाल विकास से सम्बंधित परामर्श देता है। प्रादेशिक राज्य स्तरीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बाल विकास से सम्बंधित परियोजनाओं के सम्बंध में सेमिनार, वर्कशॉप आदि के माध्यम से परामर्श देने का कार्य करता है।

(7) अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग – बाल विकास क्षेत्र में विभिन्न देशों के बाल विकास कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने का काम संस्थान ने किया है। श्रीलंका के बगानों में कार्य करने वाले कल्याण अधिकारियों एवं चिकित्साधिकारियों को बाल देखभाल के सम्बन्ध में, बांग्लादेश के दिवस देखभाल, कार्यकर्ताओं को लाओस के स्कूल पूर्व शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान किया है। संस्थान ने विभिन्न सांस्कृतिक विनिमय कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल, सभाओं, प्रकाशनों एवं अभिलेखीयकरण आदि के क्षेत्र. में विदेशों की कई संस्थाओं के साथ पारस्परिक हित के लिए सहयोग स्थापित किया है।

महिला कल्याण (Women Welfare)

भारत में महिलाओं की स्थिति 18वीं सदी के बाद खराब हो रही हैं। मुस्लिम युग में महिलाओं की स्थिति में कमी आयी और अंग्रेजों के काल में इनकी स्थिति दासों के दास (Slave of the Slaves) की स्थिति में पहुंच गयी। इस स्थिति को जिम्मेदार भी ब्रिटिश शासन रहा है। अंग्रेजी शासन के पूर्व भारत में महिलाओं की स्थिति में समानता रही है। वे घरेलू कार्यों के अतिरिक्त उत्पादन कार्यों में भी पुरुषों का हाथ बंटाती रही हैं। ब्रिटिश शासन में स्थानीय घेरलू उद्योग समाप्त हो गये। जिससे महिलाएँ ही नहीं पुरुष भी बेरोजगार हो गए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं में जागरूकता आयी है। शिक्षा, प्रशासन, इंजीनियर, डॉक्टर, प्रत्येक व्यवसाय में महिलाएँ आगे आयी हैं। महिलाओं की जनसंख्या में कमी आयी है, उसका मुख्य कारण कछ सामाजिक समस्याएँ जिनमें के लिए समाज सुधारकों ने प्रयास किया। आज भी भारत सरकार दहेज प्रथा को रोकने के लिए प्रयास कर रही है। दहेज प्रथा के कारण कुछ क्षेत्रों में महिलाओं, बच्चों की भ्रूण हत्याएँ हो रही हैं। जो उनकी जनसंख्या पर प्रभाव डाल रही हैं। इनमें साक्षरता दर भी कम हुई है। इनके स्वास्थ्य के प्रति संरक्षकों में उदासीनता है, फलतः कुपोषण की सबसे अधिक शिकार लड़कियाँ हैं फलतः माताएँ भी कुपोषण की शिकार हैं।

मैं तो यह मानता हूँ कि महिलाओं का विकास हुआ है और हो रहा है किन्तु पुरुष की मानसिकता में विकार आया है जिसके कारण महिलाओं पर अत्याचार की घटनाएँ स्वतंत्रता के बाद बहुत बढ़ गयी है। पुरुष महिलाओं को आगे लाने के पक्ष में नही है। इसीलिए लड़कियों की शिक्षा पर प्रतिबंध लगाता है। आए दिन बलात्कार आदि की घटनाओं के पीछे भी पुरुषों का मनोविकार ही है। सरकारें चाहकर भी इस घटनाओं को रोक नहीं पा रही है। हर व्यक्ति के पीछे पुलिस तो लगायी नहीं जा सकती। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं का आरक्षण प्राप्त है किन्तु देखा यही जाता है कि चुनी हुई प्रधान, या प्रमुख चूल्हाचौके में ही रहती है उनके पति ही वे सारा दायित्व निर्वाह करते हैं।

समाज सुधारकों ने 19वीं सदी से ही महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए प्रयास किए जिसके लिए कई कानून बने। समाज सुधारों के 100 वर्षों और आज के कानूनों ने भी महिलाओं में अपेक्षित सुधार नहीं लाया है, जिसकी आवश्यकता है।

बालिका वर्ष (Girl Child Year)

1989 के सार्क सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि 1990 को बालिका वर्ष के रूप में मनाया जाएगा। भारत में भी बालिका वर्ष मनाया गया और अनेक सम्मेलन आयोजित किए। इस अवधि में महिलाओं के शोषण और उनके विकास पर विचार विमर्श हुए।

इस अवधि में बाल विवाह रोकने के लिए खूब प्रचार प्रसार किए गए। 18 वर्ष से कम उम्र की लड़कियों के विवाह पर रोक के लिए प्रचार माध्यमों ने बहुत ध्यान दिया गया। काल निर्धारण के कारण मादा भ्रूण हत्या में बहुत अधिक वृद्धि हुयी।

केन्द्र तथा राज्य स्तर पर महिला कल्याण कार्यक्रम

संयुक्त राष्ट्र ने 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष और 1975–85 को महिला दशक घोषित किया तभी से भारत में भी महिला दिवस मनाया जाता है भारतीय संविधान में महिलाओं को समानता का अधिकार, पोषक आहार का अधिकार, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा अवसरों का अधिकार प्रदान किया है। समोकित शिशु विकास योजना शिशुओं और माताओं के कल्याण के लिए राज्यों और केन्द्र सरकारों द्वारा चलाया जाता है, जिसका प्रभाव पड़ा है–

1. जन्म के समय शिशु का भार बढ़ा, कुपोषण की समस्या में कमी बाल मृत्यु दर में कमी आयी है।

2. बीस सूत्रीय कार्यक्रमों में महिला विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। प्रसूता महिलाओं, जनजातीय महिलाओ, पर्वतीय और पिछड़े क्षेत्रों की महिलाओं के लिए विशेष परियोजनाएँ संचालित की गयीं।

3. महिला एवं शिशु विकास निगमों की स्थापना।

4. स्वैच्छिक संगठनों तथा महिला आवासों का निर्माण।

5. कामकाजी महिलाओं के लिए आवास ग्रहों एवं शिशु ग्रहों की व्यवस्था।

6. महिलाओं के लिए सरकारी सेवाओं में प्रवेश के लिए उम्र की सीमा में कभी करना।

महिला एवं बाल विकास द्वारा विभिन्न योजनाएँ

(1) कामकाजी महिलाओं के लिए आवास गृह (Hostel for Working Women) स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं में जागरूकता आयी है और वे विभिन्न क्षेत्रों में कार्य की तलाश में है और विभिन्न सेवाओं में कार्य करने लगी हैं। 1972 में कामकाजी महिलाओं के लिए आवासगृहों की योजना का आरम्भ हुआ जिसके लिए स्वयंसेवी संगठनों को सहायता दी

जाती है। स्वयंसेवी संस्थाओं को भूमि क्रय करने के लिए 50 प्रतिशत एवं आवासगृह के निर्माण में 75 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है। अन्य संस्थाओं जैसी महिला विकास निगम, स्थानीय समितियों विश्वविद्यालयों एवं विद्यालयों को भी आवासगृह निर्माण की सुविधा प्रदान की जाती है। पहले 10 लाख की जनसंख्या वाले शहरों को ही आवास निर्माण के लिए सुविधा दी जाती थी बाद में यह 02 लाख की जनसंख्या पर भी आवास गृहों के निर्माण की सुविधा उपलब्ध है।

<u>रोजगार एवं आय उत्पादन के कार्यक्रम (Employment and Income Generating Program)</u> :–

1982–83 में इस कार्यक्रम का आरम्भ हुआ। इसका उद्देश्य था समाज के कमजोर वर्गों की महिलाओं को प्रशिक्षित कर स्वरोजगार के लिए प्रेरित करना। इस कार्यक्रम के लिए सहजता छव्त्।क के माध्यम से किया जाता है। इन कार्यक्रमों का संचालन स्वयंसेवी संगठनों निगमों तथा स्थानीय संस्थाओं के द्वारा किया जाता है।

विभाग द्वारा स्वैच्छिक संगठनों को उन लड़कियों और महिलाओं की सुरक्षा लिए अनुदान दिया जाता है जो पारिवारिक समस्याओं, मानसिक तनाव, सामाजिक वहिष्कार, शोषण या अन्य कानूनों से सामाजिक और नैतिक कारणों से भयग्रस्त हों। इस योजना के अन्तर्गत डाक्टरी सहायता, सुविधाएँ एवं सुरक्षा, व्यावसायिक तथा मनोरंजनात्मक कार्य आदि आते हैं एक समय में एक ग्रह में 30 महिलाओं को रहने की सुविधा प्राप्त है।

<u>महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों (Education for Prevention of atrocities on Women)</u>

इस कार्यक्रम का संचालन स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से किया जाता है । इसमें महिलाओं के सामाजिक उत्थान, जुल्मों को रोकने के लिए शिक्षा कार्य आदि का प्राविधान किया गया है इसके लिए प्रचार–प्रसार शिक्षाप्रद शोध पत्रों एवं पुस्तकों आदि का प्रकाशन किया जाता है। नुक्कड़ नाटकों कठपुतली नृत्य आदि स्थानीय संशाधनों द्वारा इस कार्यक्रम को संचालित किया जाता है। इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त महिला कल्याण के क्षेत्र में अनेक कानूनों का भी निर्माण किया गया जो महिलाओं के शोषण को बचाने में समर्थ है।

<u>सती रोकथाम अधिनियम 1987(Commissionn SatiPrevention Act 1987)</u> :–

कोई नवविधवा अपने पति की मृत्यु के बाद स्वयं आत्मदाह करले इसे सती कहा गया है। राजाराम मोहन राय (1932–1838) ने इस प्रथा का तीव्र विरोध किया। विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856 से लागू हुआ। 1987 में रूपकुंवर के द्वारा आत्महत्या की घटना के कारण यह अधिनियम बना जिसके अन्तर्गत आत्मदाह करने का प्रयास करने, उसे प्रोत्साहन देने, बढ़ावा देने वाले के विरुद्ध मृत्यु दण्ड या आजीवन कारावास दिया जा सकता है। उसी कानून के द्वारा सती प्रथा का समर्थन करने वाले या उसके एजेन्ट को भ्रष्ट व्यवहार करने वाला माना जाएगा।

<u>महिला कैदियों पर राष्ट्रीय एक्सपर्ट कमेटी (National Expert Committee on Women Prisionors)</u> :–

महिला अपराधियों के साथ बर्ताव की छानबीन के लिए 1986 में न्यायमूर्ति के आर0 कृष्ण अय्यर की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ। कारावास में महिलाओं के साथ हो रहे व्यवहार, सुविधाओं और सेवओं में कमी आदि का अध्ययन करने के लिए इस समिति का गठन हुआ जिसके आधार पर भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों से सम्पर्क किया गया है। इन महिलाओं की सुरक्षा के लिए एक अन्य मंत्रालय कार्यवाही दल की स्थापना की गयी है।

स्वरोजगारी महिलाओं परराष्ट्रीय समिति (National Commission on Self Employed Women) :–

सेवा संस्था की प्रमुख स्वरोजगारी महिलाओं को प्रोत्साहन देने में अग्रणी श्रीमती इला भट्ट की अध्यक्षता में 1987 में एक समिति की स्थापना हुई। महिलाओं के लिए रोजगार, स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक स्तर का अध्ययन करना इस समिति का उद्देश्य था। इस आयोग के मुख्य उद्देश्यों में असुरक्षित महिलाओं को प्रकाश में लाना, उनकी गरीबी पर ध्यानदेना, परिवार की आर्थिक स्थिति में विकास को राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था से जोड़ कर देखना असंगठित महिला श्रमिकों को संगठित करने के तरीके बतलाना आदि आते हैं।

आयोग के कार्यों में मुख्य कार्य वैधानिक सुरक्षा विकास नीतियों का प्रयास, सेहत के मुद्दे विचार विनिमय की पद्धतियाँ और संगठनात्मकता थे। इन क्षेत्रों के अध्यक्ष के लिए महिला श्रमिकों से जानकारी के लिए प्रश्नावली तैयार किया गया। जिसके अनुसार अनेक राज्यों का दौरा कर अध्ययन किया गया।

आश्चर्य की बात है कि इस रिपोर्ट पर सरकार ने अब तक कोई ध्यान नहीं दिया भले ही श्रीमती इला भट्ट को राष्ट्रीय पुरस्कार इस वर्ष नवाजा गया है।

महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए कुछ सुझाव

1. महिला कल्याण हेतु अनेक कार्यक्रम प्रस्तावित है किन्तु उनका क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा हैं। क्रियान्वयन को सशक्त बनाने की आवश्यकता है।

2. राज्य सरकारों की कार्यवाही की गति बहुत धीमी है उसमें सुधार अपेक्षित है।

3. सभी राज्यों में महिला विकास निगमों की स्थापना की जानी चाहिए।

4. महिलाओं को न्यायालयों और पुलिस में अधिक भागीदारी दी जानी चाहिए।

5. महिला कल्याण कार्यक्रमों की योजना निर्माण, क्रियान्वयन आदि की जिम्मेदारी महिलाओं को सौंप दी जानी चाहिए।

6. राज्य यदि कार्यक्रमों को लागू करने में सुस्ती दिखलाते हैं तो केन्द्र को चाहिए कि वह स्वयं हस्तक्षेप कर कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करे।

7. महिला कार्यक्रमों के लिए अधिक उत्तरदायित्व स्वयं सेवी संस्थाओं को देना चाहिए और उसनें राज्यों का हस्तक्षेप न हो।

8. महिला विकास कार्यक्रमों के लिए कोष का रोना न रोया जाय । जो कुछ भी राज्य सरकार के पास उपलब्ध है उसमें से ही इन कार्यक्रमों के लिए कोष आवांटित किया जाना चाहिए।

9. महिला कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए योग्य एवं सक्षम कार्मिकों का चयन होना चाहिए और उन्हें सघन प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

10. ग्रामीण महिला विकास कार्यक्रमों में असफलता बहुत मिली है। इसका कारण महिलाओं में कार्यक्रमों में रुचि का अभाव। रुचि उत्पन्न करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम जैसे जागरूकता प्रशिक्षण, स्वयं की भागीदारी आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। ट्रायम और डवाफरा जैसी परियोजना के असफल होने के बाद नए कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। उसमें भी स्वयंसेवी संस्थाओं और सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों की ही चांदी है । अपात्र लोगों को स्वर्ण जयंती स्वरोजगार का लाभ दिया जा रहा है। जिससे बैंकों के ऋण वसूली में दिक्कतें आ रही है। इसलिए ग्रामीण महिलाओं के लिए आवश्यक है कि उनके कार्यक्रमों का उन्हीं के द्वारा नियंत्रण हो और उन्हीं के द्वारा क्रियान्वयन। बीच में स्वयंसेवी संस्था या सरकारी कर्मचारी को नहीं सम्मिलित किया जाना चाहिए।

11. महिलाओं के विकास और सुरक्षा के लिए अनेक कानून हैं लेकिन उनके अनुपालन में नौकरशाही की कोई रुचि नहीं है।

12. महिला उत्पीड़न जैसे दहेज हत्या, सम्बन्ध विच्छेद, संरक्षण, बाल विवाह, विधवा पेंशन आदि के लिए शिविर लगाकर महिलाओं को जागरूक करने की आवश्यकता है, कुछ स्वयं सेवी संस्था जैसे हिमांचल प्रदेश में सूत्र (Sutra) एक संस्था है जो वृद्धा, विधवा पेंशन दिलाने में सहायता करता है तथा शराब बंदी के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाता है।

<u>युवा कल्याण (Youth Welfare)</u> – युवा ही किसी देश की रीढ़ हैं जो जब चाहे समाज को बदल सकता है। स्वतंत्रता आंदोलन में युवाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। बर्ड्स वर्थ ने युवाओं को राष्ट्रीय सम्पत्ति बतलाया था। पंडित जवाहरलाल ने इसमें कहा था, ष्सारे संसार में बच्चे एक हैं वे संकुचित राष्ट्रीयता से विचलित संसार में एकता का तत्व बन सकते हैं, बच्चे ही स्मरण दिलाते हैं कि मानव अमर है यद्यपि मनुष्य नश्वर है। राष्ट्र को अपनी क्षमताओं का ज्ञान बच्चों से होता है एवं उसका परीक्षण इस तत्व से होता है कि उसने उनके लिए क्या किया है। इन्दिरा गांधी के इन बचनों के साथ पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधीने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, ''हमारे बच्चे सर्वाधिक महत्वपूर्ण संशाधन हैं तथा उनके विकास हेतु सभी सम्बन्धित निवेश आवश्यक हैं''। यूनिसेफ के कार्यकारी निदेशक जेम्स पी. ग्राम के शब्दों में, ''बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास की सुरक्षा हमारे समाज के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सभी निवेशों से अधिक महत्वपूर्ण हैं।'' इन्हीं बच्चो ने युवा के रूप में राष्ट्र निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।

भारत सरकार, राज्य सरकार और अन्य संस्थाएँ युवा के महत्व को समझती है। इसलिए विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है। 1985 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने युवा वर्ष के रूप में घोषित किया। भारत सरकार 12 जनवरी को युवा दिवस के रूप में मनाती है और 12 से 18 जनवरी तक युवा सप्ताह आयोजित किया जाता है। जिसमें सरकारी, निजी, और शिक्षण संस्थाएँ बढ़ चढ़कर हिस्सा लेती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् युवाओं को राजनैतिक शक्ति के रूप में पहचान मिली। विभिन्न राजनैतिक दलों ने अपने–अपने युवा संगठन खड़ा किये। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में चुनावों ने जोर पकड़ा। राष्ट्र निर्माण और राष्ट्रीय सेवा के लिए श्भारत युवक समाज की स्थापना पंडित जवाहरलाल नेहरू ने किया। सी.डी. देशमुख भारतीय युवा को रचनात्मक कार्यों में लगाकर अनुशासनहीनता से बचाना चाहते थे। राष्ट्रीय कैडेट कोर की स्थापना हुई। केन्द्र सरकार ने युवाओं को कृषि कार्यों से सम्बद्ध करने के लिए युवा क्लबों की स्थापना किया।

1960 के दशक में पश्चिमी देशों में युवाओं में विद्रोह की भावना ने जन्म लिया जिसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। 1969 को राष्ट्रीय युवा परामर्श बोर्ड को स्थापना हुई। राज्यों ने भी इसका अनुसरण किया। वर्ष 1972 में नेहरू युवा केन्द्र की स्थापना गैर विद्यार्थी युवकों के लिए किया गया तथा इसी के आसपास विश्व युवा केन्द्र की स्थापना हुई जो युवा कल्याण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करने में सक्षम रहा। 1978 में राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का संचालन निरक्षर युवाओं को साक्षर बनाने तथा उनमें जागरूकता प्रदान करने के लिये आरम्भ हुआ।

1980 में युवाओं ने रक्तपात शुरू कर दिया और आतंकियों के भेष में लूटपाट, आगजनी और ठगी में सम्मिलित हो गए।

<u>राष्ट्रीय युवा नीति (National Youth Policy)</u> – भारत सरकार ने राष्ट्रीय नीति की घोषणा वर्ष 1988 के अंत में किया। इस नीति के मुख्य उद्देश्य हैं –

1. युवावर्ग में संविधान के वर्णन किए गए सिद्धांतों एवं मूल्यों का सम्मान करना तथा राष्ट्रीय एकता, अहिंसा, धर्म निरपेक्षता एवं समाजवादी समाज के प्रति कटिबद्धता।

2. भारत के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण तथा पर्यावरण एवं पारिस्थिकी को सफलता प्रदान करना।

3. युवाओं में अनुशासन, आत्म निर्भरता, समता एवं न्याय, लोक कल्याण हेतु चिंतन, खेल भावना तथा कार्य एवं व्यवहार में वैज्ञानिकता लाना।

4. युवाओं को शिक्षा के अधिकतम अवसर प्रदान करना तथा उनके बहुमुखी व्यक्तित्व को विकसित करने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण, रोजगार एवं स्वरोजगार के योग्य बनाना।

5. युवाओं को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था से परिचित कराना।

<u>राष्ट्रीय सेवा योजना (National Service Scheme)</u> – इस योजना को 1969–70 में लागू किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य था सामुदायिक सेवा के माध्यम से युवाओं के व्यक्तित्व का विकास ६ सृजनात्मक कार्यों के माध्यम से छात्रों में सामाजिक चेतना का

विकास करना और उनमें हम भावना का विकास करना है स्वयंसेवियों द्वारा निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं–

1. संस्थागत कार्य जिसमें छात्रों को विद्यालय परिसर से बाहर चयनित क्षेत्र में स्वयंसेवी के रूप में कार्य करने के लिए भेजा जाता है।

2 विद्यालय परिसर के अन्तर्गत सुधार, खेल के मैदान का निर्माण, वृक्षारोपण आदि।

3. ग्रामीण परियोजनाएँ जिनमें चयनित गांवों में साक्षरता, स्वच्छता, कृषि के काम, पर्यावरण सुधार एवं संरक्षण के कार्य आदि किये जाते हैं।

4. नगरीय परियोजनाएँ जिनमें झुग्गी झोपड़ियों में सुधार, साक्षरता तथा अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों में कार्य आदि।

नेहरू युवा केन्द्र (Nehru Yuwa Kendra) :–

ग्रामीण युवकों के व्यक्तित्व के विकास के लिए कौशल प्रशिक्षण के माध्यम से ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों का संचालन करना तथा उसके योग्य बनाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है। ग्रामीण युवाओं में आत्मनिर्भरता, राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना, सामाजिक एवं धर्म निरपेक्षतावाद एवं प्रजातंत्र के मूल्यों की पहचान कराना । परियोजना चरित्र निर्माण, शारीरिक आरोग्य एवं सांस्कृतिक कार्यों के विकास पर बल देता है। इसके लिए एक नेहरू युवा केन्द्र संगठन बनाया गया जो सभी नहेरू युवा केन्द्रों की देखरेख और नियंत्रण करता है।

राष्ट्रीय सेवा स्वयंसेवी परियोजना (National Service Vatunteers: Scheme) :–

इस परियोजना का उद्देश्य युवाओं में स्वयंसेवी बनने की भावना विकसित करना था। दो वर्षों के लिए युवाओं का इसमें चुनाव होता है। इस योजना से युवाओं में चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व एवं रचनात्मक कार्यों को करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। इसमें नियुक्त दो वर्षों के लिए होती है जिसमें मानदेय और यात्रा भत्ता दिया जाता है। नेहरू युवा केन्द्र संगठन, स्वयंसेवी संगठनों राष्ट्रीय योजना कार्यक्रमों में इन्हें कार्य के लिए भेज दिया जाता है।

बालचर एवं मार्ग निर्देशन (Scout and Guide) :–.

यह एक अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन है जिसका उद्देश्य बालकों एवं बालिकाओं का चरित्र निर्माण है। इनमें देशभक्ति, कर्त्तव्यनिष्ठा एवं दूसरों के प्रति सम्मान एवं सहानुभूति की भावना जागृत की जाती है। इससे युवाओं में शारीरिक एवं बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। सरकार द्वारा वित्तीय सहायता के माध्यम से भारतस्काउट और गाइड संगठन की देखरेख में यह कार्यक्रम स्कूल और छात्रों के लिए संचालित किया जाता है।

युवा छात्रावास (Youth Hostels) – पर्यटन पर जाने वाले लिए सस्ते आवास की व्यवस्था के लिए यह कार्यक्रम चलाया जाता है। यह केन्द्र सरकार और राज्य सरकार का संयुक्त उपक्रम है।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग (International Cooperation)

भारतीय युवाओं को अन्य राष्ट्रों के साथ अन्तर्क्रिया के लिए यह कार्यक्रम संचालित है रू– निम्नलिखित क्षेत्रों में अर्राष्ट्रीय सहयोग के कार्यक्रम सम्पादित होते हैं–

(1) राष्ट्रसंघ युवा कार्यक्रम (Common Wealth Youth Programe) – राष्ट्र संघ के देशों के युवाओं के साथ सद्भावना एवं सर्वांगीण विकास के लिए इस कार्यक्रम का संचालन किया जाता है। इसके मुख्य उद्देश्य हैं। राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया में युवाओं की रचनात्मक सहभागिता, बेरोजगारी के दुष्प्रभावों को दूर करना, देश के आर्थिक सामाजिक विकास में युवाओं की योग्यता को मान्यता प्रदान करना, अन्तर्राष्ट्रीय समझ में वृद्धि के लिए अवसर प्रदान करना आदि।

इस कार्यक्रम के मार्गदर्शन के लिए कामनवेल्थ यूथ मामलों का एक परिषद है जिसका भारत स्थायी सदस्य है। कार्यक्रम के लिए वित्तीय संशाधन की व्यवस्था सदस्य देशों द्वारा किया जाता है।

(2) युवा प्रतिनिधि मंडल का अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय (International Eechange of Youth Delegations)

(3) संयुक्तराष्ट्र स्वयंसेवी कार्यक्रम (Uniled Nations Volunteers Programe) – विकासशील देशों को योग्य एवं प्रशिक्षित मानवशक्ति की अतिरिक्त व्यवस्था करने के लिए सभी देशों के व्यवसायियों को विश्व के विकास गतिविधियों में भाग लेने के लिए तथा संयुक्त राष्ट्र के सदस्य राष्ट्रों के उत्साही एवं सुयोज्य व्यक्तियों को स्वैच्छिक सेवाएँ उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इस कार्यक्रम कासंचालन किया जाता है। कृषि, स्वास्थ्य, नागरिक उड्यन ग्रामीण जल आपूर्ति सड़क निर्माण एवं संचार आदि विशेष क्षेत्रों में स्वयंसेवी कार्य किए जाते हैं।

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण (Heath and Family Welfare) – स्वास्थ्य में निवेश मानव जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने में निवेश माना जाता है। शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति ही स्वस्थ नागरिक की भूमिका का निर्वाह कर सकता है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ऐसी संरचना देने की व्यवस्था की गयी है जिसमें चिकित्सा शिक्षा की सुविधा की उपलब्धि सुनिश्चित हो सके। चिकित्सकीय शिक्षा, खाद्य पदार्थों में मिलावट को रोकना, प्रभावित औषधियों के निर्माण का मानक स्थापित किया गया। 1983 में एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का निर्माण हुआ जिसमें 2000 तक के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण से सम्बंधित लक्ष्यों का निर्धारण किया गया।

प्रशासकीय तत्र (Administrative Mechanism)

2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य के कार्यक्रम के अनुरूप केन्द्र, राज्य, जिले स्तर पर प्रशासकीय ढांचे का गठन हुआ। केन्द्र स्तर पर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का प्राविधान है जिसमें कैबिनेट मंत्री और राज्य मंत्री की नियुक्ति की जाती है। इसमें दो विभाग है स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का कार्यकारी सचिव होता है। इसके तीन अधीनस्थ कार्यालय हैं, निदेशक, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, होम्योपैथिक औषध विज्ञान

का प्रभार तथा भारतीय औषध विज्ञान प्रयोगशाला। स्वास्थ्य विभाग, चिकित्सकीय एवं जन स्वास्थ्य सम्बन्धी मामलों को देखता है जिसमें औषधि नियंत्रण एवं खाद्य पदार्थों में मिलावट भी सम्मिलित है।

<u>राज्य स्तर पर प्रशासकीय संरचना (Administrative Set up atthe State Level)</u> :—

राज्य में मंत्री / राज्य मंत्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रम को देखता है। मंत्री विभाग के कार्य के लिए मंत्रिमंडल के प्रति उत्तरदायी होता है। भारतीय प्रशासनिक सेवा का वरिष्ठ अधिकारी स्वास्थ्य सचिव होता है। वह सचिवालय स्तरया विभाग का अध्यक्ष होता है जो मंत्री को नीति निर्माण सम्बन्धी सुझाव देता है। प्रत्येक राज्य में स्वास्थ्य विभाग का एक निदेशालय होता है जो विभिन्न स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों के संचालन का उत्तरदायी होता है। उसके अधीन संयुक्त निदेशक, उपनिदेशक सहायक निदेशक, राज्य नियंत्रक आदि पद होते हैं।

<u>राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का क्रियान्वयन (Implementation of National Health Policy)</u> :— स्वास्थ्य देखभाल में अवरोध उपस्थित करने, सुधारात्मक एवं पुनर्वासीय पक्षों को ध्यान में रखा जाता है। सबके लिए स्वास्थ्य एवं जनसंख्या का स्थिरीकरण का लक्ष्य मुख्य रूप से बीसवीं सदी में भी था और इक्कीसवीं सदी में भी है। भारतीय ग्रामीण परिदृ श्य में स्वास्थ्य सेवाओं को सबको उपलब्ध कराना सम्भव नही हो पा रहा है। गांवों में काम करने के लिए चिकित्सक नही मिल रहे हैं। स्वास्थ्य केन्द्रों या दवाएँ उपलब्ध नहीं हो रही है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य परियोजना भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गया। स्वास्थ्य केन्द्रों पर नर्स और मिडवाइफ तक निवास नही करती हैं सरकार की मनसा साफ है पर कर्मचारियों और अधिकारियों की सुस्ती के कारण कोई भी कार्यक्रम सफल नही हो पा रहा है। यहाँ वर्तमान में संचालित कुछ स्वास्थ्य कार्यक्रमों की चर्चा करना आवश्यक है।

(1) <u>दृष्टिहीनता कार्यक्रम</u> — इस कार्यक्रम का संचालन पिछली शताब्दी से हो रहा है। इसका मुख्य लक्ष्य है दृष्टिहीनता को कम से कम स्तर पर लाना। इसके लिए अनेक कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं। मोतियाबिंद आदि बीमारियों की रोकथाम के लिए लाखों आपरेशन प्रतिवर्ष किए जा रहे हैं। स्कूली छात्रों की नेत्र जांच कराकर उन्हें चश्मा उलब्ध कराया जा रहा है। निश्चित रूप से धीरे–धीरे इस कार्यक्रम में सफलता दृष्टिगोचरं हो रही है। इस कार्यक्रम में स्वयंसेवी संगठनों का भी पूरा योगदान लिया जा रहा है।

<u>कुष्ठ (Leprosy)</u> — कुष्ठ एक शारीरिक बीमारी है। हमारे देश में इसे दैवीय अभिशाप के रूप में देखा जाता है। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह अभिशाप नहीं बल्कि एक बीमारी है। इसका सही उपचार होने पर ठीक हो सकताहै। इसी दृष्टि से कुष्ठ रोग समाप्ति के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। इस क्षेत्र में कुछ स्वयंसेवी संस्थाओं और समर्पित व्यक्तियों का भी योगदान प्राप्त होता है। इसके लिए कुछ जिलों में कुष्ठ नियंत्रण अधिकारियों की नियुक्ति हुई है। जो शिविर लगाकर कुष्ठ रोगियों की सेवा करते हैं। धीरे–धीरे इस पर नियंत्रण भी पाया जा रहा है।

<u>एड्स (AIDS)</u> — एड्स की पहचान अमेरिका में 1981 में हुआ। यह अब पूरे विश्व में बड़ी तेजी से फैल रहा है। भारत में इस रोग का 1985 में पता लगा। इसकी जांच के लिए अनेक केन्द्र की व्यवस्था की गयी है और व्यापक स्तर पर सरकारी और गैर सरकारी

प्रयास इस रोग को नियंत्रित करने के लिए हो रहे हैं। इस रोग का कोई सही और सटीक इलाज अभी तक उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। किन्तु इसको नियंत्रित करने के लिए विभिन्न प्रतिरोधात्मक कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। यह संक्रामक रोग नही है इसलिए इस बीमारी के रोगी को समाज में बराबरी का दर्जा दिया जाना आवश्यक है। जिससे कि भावनात्मक रूप से टूटने न पाए। कुछ प्रतिरोधात्मक दवाएँ भी हैं जिनसे मां से बच्चे को यह बीमारी न लगे।

राष्ट्रीय मधुमेह नियंत्रण कार्यक्रम (National Diabetes Control Program) :–

मधुमेह एक आम बीमारी है जिसका प्रसार भारत में बहुत ही तेजी से हो रहा है। खान–पान की आदतों में सुधार और परहेज इस बीमारी को थोड़ा कमकर सकते हैं लेकिन इसका स्थायी इलाज नहीं है। शरीर में इन्सुलीन की कमी के कारण यह बीमारी होती है। इन्सुलीन की कमी को दूर करने के लिए अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। यह कार्यक्रम बहुत पहले से चल रहा है।

राष्ट्रीय रोग निरोधक प्रौद्योगिकी मिशन (National TechnologyMission on Imnunisation) :–

विभिन्न बीमारियों के लिए बच्चों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास करना इस कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य है। डी.पी.टी., चेचक, पोलियो, खसरा आदि के टीकेलगाकर इन बीमारियों को रोकने की आवश्यकता महसूस की गयी। चेचक पहले ही समाप्त हो चुका है। पोलियो भी समाप्ति की ओर है। बी०सी०जी० के टीके तपेदिक से बचाव के लिए बच्चों को लगाए जाते हैं। टिटनैस के टीके गर्भवती महिलाओं को इसलिए लगाए जाते हैं कि जन्म के समय बच्चों को टिटनेस न हो। अतिसार आदि बीमारियों से बचाव के लिए व्ै के घोल का उपयोग किया जाता है जो कि अब प्रत्येक नागरिक के जेहन में है।

भारत सहित सभी पिछड़े देशों में बाल और मातृ मृत्युदर अधिक है। पोषण के अभाव में रक्तक्षीणता महिलाओं में बहुत अधिक है जिसे दूर करने के लिए आयरन और फोलिक एसिड सरकारी अस्पतालों में मुफ्त दिया जाता है। 1 से 5 वर्ष तक के बच्चों को विटामिन श्एश् की गोलियाँ दी जाती हैं जिससे कि बच्चों में दृष्टिहीनता न उत्पन्न हो। महिलाओं में बार–बार प्रसव के कारण कमजोरी और बीमारी की सम्भावना रहती है। जो मातृ मृत्युदर में वृद्धि का कारण बनता है। अनावश्यक गर्भधारण को रोकने के लिए अनेक उपाय एवं दवाएँ हैं जो स्वास्थ्य केन्द्रों में निःशुल्क प्राप्त होती है।

असुरक्षित प्रसव भी मातृ एवं बाल मृत्युदर में वृद्धि के लिए जिम्मेदार है। सरकारी चिकित्सालयों में निःशुल्क प्रसव की व्यवस्था की गयी है। गांवों में प्रसव के लिए दायी प्रशिक्षण दिए गए हैं जो सफलतापूर्वक प्रसव करा सके। परिवार कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा जनसंख्या नियंत्रण के लिए जागरूकता और अन्य कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। जिससे बच्चों में अन्तर रखा जा सके। स्त्री भ्रूण हत्या एक और बड़ी समस्या है जिसके कारण पुरुष और महिला की जनसंख्या में अन्तर बढ़ता ही जा रहा है। स्त्री भ्रूण हत्या रोकने के लिए भारत सरकार ने भ्रूण परीक्षण कार्य को समाप्त करने के लिए वैधानिक उपाय किया है।

इस प्रकार कुछ प्रतिरोधात्मक कार्यक्रम हैं, जो स्वास्थ्य और परिवार कल्याण के अन्तर्गत चलाए जाते हैं।

पोषण कार्यक्रम (NutritionPrograms)

प्रोटीन एनर्जी, कुपोषण, रक्तक्षीणता, और विटामिन 'ए' की कमी आदि विभिन्न पोषण सम्बन्धी समस्याएँ हैं। जिनके लिए आवश्यक कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है प्रदेशों के स्वास्थ्य निदेशालयों में पोषण के कार्यक्रमों के संचालन की व्यवस्था है जिसे वर्तमान में समेकित बाल विकास परियोजना के माध्यम से चलाया जा रहा है। जनसंख्या के विभिन्न वर्गों में खुराक एवं पोषण स्थिति का पता लगाना, पोषण शिक्षा के लिए अभियान चलाना, पूरक भोजन कार्यक्रमों का निरीक्षण करना आदि कार्यक्रम काफी समय से चलाए जा रहे हैं। सबसे अधिक प्रभावित वर्ग बच्चे, गर्भवती महिलाएँ तथा दूध पिलाने वाली महिलाएँ हैं। विभिन्न पोषण कार्यक्रमों के अन्तर्गत समेकित बाल विकास पूरक आहार, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा, टीकाकरण, स्वास्थ्य जांच तथा अनौपचारिक शिक्षा का कार्य करती हैं। स्कूलों के बच्चों के लिए मध्यान्ह भोजन का कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है। इस प्रकार अनेक कार्यक्रम कुपोषण को कम करने के लिए चलाए जा रहे हैं। बच्चों और महिलाओं में रक्ताल्पता को दूर करने के लिए आयरन एवं फोलिक एसिड की गोलिया निःशुल्क वितरित की जाती है।

चिकित्सा शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रशिक्षण (Medical Education] Reaserch and Training) :–

सम्पूर्ण स्वास्थ्य क्षेत्र में चिकित्सा शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण स्थान है। नयी औषधियों तरीकों और दवाइयों के लिए अनुसंधान होते रहते हैं नवीन रोगों के परीक्षण, निदान आदि से सम्बन्धित चिकित्सकीय, पैरा मेडिकल आदि को प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है विभिन्न क्षेत्रों में इस तरह के अनेक संस्थाएँ स्थापित की गयी है जो शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देती है। भारतीय चिकित्क परिषद, भारतीय दन्त विज्ञान परिषद, भारतीय नर्सिंग परिषद एवं भारतीय फार्मेसी परिषद वे संस्थाएँ हैं, जो अपने–अपने क्षेत्रों में शिक्षण संस्थाओं को नियंत्रित करती है। राष्ट्रीय आयुर्विज्ञान एकेडमी आयुर्विज्ञान को प्रोत्साहन देने और गुणवत्ता को प्रोत्साहित करने के लिए अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य कर रही है।

भारतीय चिकित्सीय अनुसंधान परिषद (Indian Council of Medical Research) :–

देश में चिकित्सीय अनुसंधान के लिए भारतीय चिकित्सीय अनुसंधान परिषद का गठन किया जो देश के अन्य विभिन्न संस्थाओं को नियंत्रित करता है पूरे देश में अनेक संस्थाएँ हैं जहाँ अनुसंधान प्रशिक्षण एवं शिक्षण का कार्य किया जाता है मुख्य रूप से राष्ट्रीय पोषण संस्थान, राष्ट्रीय वायरस विज्ञान, तपेदिक अनुसंधान केन्द्र, राष्ट्रीय व्यावसायिक स्वास्थ्य संस्थान, प्रजनन अनुसंधान केन्द्र, केन्द्रीय कोढ़ संस्थान, बेक्टर नियंत्रण संस्थान, रक्त विज्ञान संस्थान आदि अनेक संस्थाएँ हैं जो देश में अनुसंधान और प्रशिक्षण के कार्यों में संलग्न है। इन संस्थानों का व्यय भारत सरकार स्वयं वहन करती है। आयुर्विज्ञान की विशिष्ट शाखाओं में शोध के लिए अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्था तथा

कई स्नातकोत्तर संस्थानों की स्थापना केन्द्र सरकार द्वारा किया गया है। विभिन्न चिकित्सीय अनुसंधान किए जा रहे हैं।

रोग मुक्ति या प्रतिरोधात्मक औषधियों के लिए केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान कसौली की स्थापना की गयी है। जहाँ डी.पी.टी., डी.टी. एन्टी टायफायड ऐन्टीरेवीज, यलो फीवर हैजा के टीके, एवं ए.टी. सेरा जैसी दवाओं पर अनुसंधान होता है तथा इनका उत्पादन किया जाता है। यहाँ विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा अन्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण एवं तकनीकों की जानकारी दी जाती है।

स्वास्थ्य शिक्षा (Health Education)

स्वास्थ्य सेवा निदेशालय के अन्तर्गत केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा व्यूरो की स्थापना की गयी है। मंत्रालय के विभिन्न कार्यक्रमों का प्रचार–प्रसार क्षेत्रीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देना, राज्यों और अन्य संस्थाओं को शिक्षण सामग्री का वितरण करना, प्रशिक्षण की नयी विधियों की खोज करना, सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं को तकनीकी सहायता प्रदान करना, स्कूली बच्चों के लिए स्वास्थ्य शिक्षा पाठ्यक्रम का विकास करना तथा स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रशिक्षण, अनुसंधान आदि के क्षेत्र में सहयोग प्रदान करना आदि सभी कार्यक्रम स्वास्थ्य शिक्षा व्यूरो के अन्तर्गत आते हैं।

व्यूरो स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय की विभिन्न योजनाओं का विभिन्न मिडिया माध्यमों से प्रचार–प्रसार करता है। चार पत्रिकाओं स्वस्थ हिन्द, आरोग्य संदेश, महानिदेशक स्वास्थ्य सेवा विवरिणिका एवं स्वास्थ्य शिक्षा समाचार प्रकाशित करता है। जिसमें निदेशालय के कार्यक्रमों का विस्तार से प्रचार–प्रसार किया जाता है। विभिन्न भाषाओं में प्रचार सामग्री तैयार कराता है और उसे विभिन्न राज्यों को वितरित करने का कार्य करता है। स्वास्थ्य सेवा के बारे में प्रदर्शनिया भी आयोजित की जाती है तथा रेडियो और टी.वी. के लिए कार्यक्रमों के निर्माण का भी कार्य व्यूरो के द्वारा किया जाता है।

व्यूरो का अनुसंधान एवं मूल्यांकन प्रभाग स्वास्थ्य सेवाओं को अंगीकृत करने के लिए समाज के व्यवहार का भी अध्ययन करता है।

भारतीय चिकित्सा प्रणाली (Indian System of Medicine)

भारतीय चिकित्सा प्रणाली में आयुर्वेद, सिद्धा, यूनानी, अपाची एवं प्राकृतिक प्रणाली सम्मिलित है। इस प्रकार के अन्तर्गत प्रशिक्षित चिकित्सक, ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत हैं इनकी शिक्षा के लिए भी आयुर्वेदिक यूनानी कालेज देश के अन्तर्गत हैं जहाँ के प्रशिक्षित चिकित्सक विभिन्न क्षेत्रों में सेवाओं में संलग्न है। केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद इन विधाओं में चिकित्सा एवं शिक्षा को नियंत्रित करता है। केन्द्रीय होमियोपैथी परिषद भी होम्योपैथिक शिक्षा को नियंत्रित करता है। गैर सरकारी क्षेत्र में प्राकृतिक चिकित्सा के लिए भी ये संस्थान है।

विधिक विकास (Statutory Bodies)

भारतीय मेडिकल परिषद (Medical Council of India) की स्थापना 1933 में एक संविधिक निकाय के रूप में हुई। इस संस्था का मुख्य कार्य चिकित्सा शिक्षा कोनियंत्रित करना है। इसी के द्वारा निर्धारित मानकों के आधार पर विभिन्न चिकित्सा संस्थाओं का संचालन किया जाता है। समय–समय पर इस परिषद द्वारा चिकित्सा विद्यालयों का निरीक्षण किया जाता है। इस निकाय के अन्य कार्यों में भारतीय चिकित्सा रजिस्टर का रखरखाव, चिकित्सा योग्यताओं की पारस्परिक मान्यता के सम्बन्ध में विदेशों से ताल मेल विदेशों में प्रवेश चाहने वाले छात्रों के लिए प्रमाणपत्र देना, तथा बी0सी0 राय पुरस्कार के सम्बन्ध में विचार विमर्श करना आदि आते हैं। भारतीय मेडिकल परिषद के 1933 के कानून को 1956 में बदल दिया गया है।

इसी प्रकार विभिन्न प्रकार की चिकित्सा के लिए विभिन्न परिषद गठित किए गए हैं जो विशेषज्ञचिकित्सा के लिए कार्य करते हैं–

1. भारतीय डेन्टल परिषद (Dental Council of India)

2. भारतीय नर्सिंग परिषद (Indian Nursing Council)

3. भारतीय फार्मेसी परिषद (Pharmacy Council of India)

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग (International Cooperation for Health and Family Welfare) – स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय अपनी विभिन्न स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सेवाओं के लिए विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सहयोग तथा तकनीकी एवं भौतिक सहायता प्राप्त करता है। मुख्य रूप से निम्नलिखित संस्थाओं से मंत्रालय सहयोग प्राप्त करता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization)

संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय आपातकालीन बाल कोष (UNICEF) संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या अध्ययन कोष (UNIFPA) एवं विश्व बैंक आदि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से स्वास्थ्य विकास और अध्ययन के क्षेत्र में सहयोग और सहायता प्राप्त करता है। भारत यूनिसेफ और विश्व स्वास्थ्य संगठन का सदस्य है जिसके लिए वार्षिक निर्धारित चंदा दिया जाता है तथा इन संस्थाओं से सहायता प्राप्त करता है। यूनिसेफ सर्वागीण रोग प्रतिरोधक कार्यक्रम एवं अतिसाररोग नियंत्रण, कुष्ठ नियंत्रण, गलगंडू नियंत्रण, चेचक नियंत्रण तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के निरीक्षण आदि के क्षेत्र में सहायता करता है।

SIDA बहु औषधि चिकित्सा, राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन, तपेदिक नियंत्रण, कुष्ठ नियंत्रण तथा स्कूल स्वास्थ्य के लिए सहायता प्रदान करता है।

USAID मूलभूत एवं निवारक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने, परिवार नियोजन, पोषक आहार उपलब्ध कराने, वंचित जनसंख्या एवं क्षेत्र के लिए निजी एवं सरकारी क्षेत्र की संस्थाओं की सहायता करता है। क्षेत्रीय महामारी विज्ञान, विभिन्न प्रशिक्षण आदि कार्यों के लिए भारत सरकार की सहायता करता है।

<u>भारत में परिवार नियोजन (Family Planning in India)</u> - भारत की सबसे बड़ी समस्या तीव्र गति से हो रही जनसंख्या वृद्धि है। भारत दुनिया का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है जिसकी जनसंख्या 120 करोड़ के आसपास है इस वृद्धि दरके कारण अनेक आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का जन्म हुआ है। शहरों की बढ़ती हुई जनसंख्या, भूख और गरीबी के मुख्य कारण जनसंख्या वृद्धि है। गांवों में कृषकों की भूमि बंटकर छोटे–छोटे अनार्थिक इकाइयों में परिवर्तित हो गए हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी यह समस्या बढ़ती रही है और पूरी जनसंख्या के भरण पोषण, शिक्षा आदि के लिए समस्या उत्पन्न हो रही है। भारत में भू क्षेत्र विश्व की 2.4 प्रतिशत है और इसकी जनसंख्या 15 प्रतिशत से अधिक है। परिवार कल्याण के लिए विभिन्न कार्यक्रम 1952 से चलाए जा रहे हैं। जिस पर अरबों रुपये व्यय किए गये किन्तु समस्या का समाधान नहीं हो सका। इसके अनेक कारण हैं अशिक्षा, अज्ञानता, संकोच, परम्परा, सोच एवं संशाधनों की उपलब्धता में कमी आदि।

<u>परिवार कल्याण कार्यक्रमों को बेहतर बनाने के उपाय</u>

(1) <u>गर्भ निरोधक विधियाँ (Contraceptive)</u> – परिवार कल्याण की सफलता के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक विवाहित जोड़ा स्वेच्छा से परिवार नियोजन के साधनों का उपयोग करें। इसके लिए आवश्यक है कि गर्भ निरोधकों की नियमित और गणवत्तापूर्ण आपूर्ति हो। गर्भनिरोधक विधियाँ दो प्रकार की होती हैं। स्थायी तथा बच्चों में अन्तर रखने वाली इसे ज्मतउपदंस ता छवदजमतउपदंस का नाम दिया गया है। स्थायी विधियों में पुरुष की नराबंदी और महिला की नलिका बंदी का कार्य है जो चिकित्सालयों ने निःशुल्क उपलब्ध है अरणागी विधि से क (Coctus interuptus rythem Method, कम्जोग या डायफाम, जेली, I.U.D.तथा मुंह से रवाने वाली गोलियाँ है। इन सभी विधियों का नियमित उपयोग करने की आवश्यकता प्रत्येक विवाहित जोड़े को है। ग्रामीण गोत्रों में वितरित किए जाते हैं। माला एन और माला डी महिलाओं द्वारा उपयोग किया जाता है जो सरकारी चिकित्सालयों में गुप्त उलब्ध है तथा कुछ शरणाओं द्वारा नाग मात्र के मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है।

(2) <u>उत्प्रेरक एवं पुरस्कार (Incetives and Awards)</u> – उत्प्रेरक जनसंख्या नियंत्रण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। विभिन्न सरकारों ने नसबन्दी के कारण मजदूरी के स्थान पर मुआवजा देने का प्राविधान किया है। इसकी प्रतिपूर्ति लाटरी, ग्रीन कार्ड तथा नगद धनराशि के रूप में तथा कुछ स्कीमों में विशेष छूट दिए जाने का प्राविधान किया है। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय सर्वोत्तम उपलब्धि वाले राज्यों को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करता है।

(3) <u>वित्तीय आवंटन (Financial Outlays)</u>– परिवार कल्याण कार्यक्रम केन्द्रपोषित कार्यक्रम है। कार्यों के अनुसार केन्द्रीय मंत्रालय राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के लिए धन का आवंटन बढ़ता रहा है।

(4) <u>संगठित सेक्टर को वित्तीय सहायता (Financlal Help to the Organised Sector)</u> –अन्य मंत्रालयों, विभागों, सार्वजनिक निजी उपक्रमों को परिवार कल्याण कार्यक्रम लिए धन का आवंटन किया जाता है ताकि कार्यक्रम के लिए प्रोत्साहन मिल सके। रेलवे प्रतिरक्षा एवं डाक तार विभाग अपने कार्मिकों के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम संचालित

करता है। जिसके लिए शतप्रतिशत धनराशि स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। रक्षा मंत्रालय, रेलवे आदि सभी विभाग अपने कर्मचारियों के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रमों का संचालन करते है जिसके लिए प्रतिपूर्ति का प्राविधान है श्रम मंत्रालय।

विभिन्न सार्वजनिक और निजी उपक्रमों के मजदूरों के लिए इस कार्यक्रम को समन्वित करता है। UNFPA, ILO, SCOPE तथा FICCI आदि संस्थायें परिवार कल्याण कार्यक्रम के क्षेत्र में सहायता प्रदान करते हैं।

(5) <u>स्वयंसेवी संगठनों की संलग्नता (Involvement of Voluntary Agencies)</u> – स्वयंसेवी संस्थाएँ जन आन्दोलन चलाने के कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। इसलिए परिवार कल्याण कार्यक्रम को भी जन आंदोलन का रूप प्रदान करने के लिए अनुदान एवं सहायता प्रदान किया जाता है। भारतीय कल्याण समिति के माध्यम से छोटे–छोटे स्वयंसेवी संस्थाओं को इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए अनुदान उपलब्ध कराया जाता है।

(6) <u>जनशिक्षा एवं प्रचार गतिविधियाँ (Mass Education and Miedia Activities)</u> – देर से विवाह, बच्चों के जन्म में अन्तर एवं छोटे परिवार के गुणों के सम्बन्ध में प्रचार–प्रसार के लिए स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय जनशिक्षा एवं प्रचार का आयोजन करता है।

<u>इकाई–3</u>

समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धांत अवधारणा और उद्देश्य (Social Welfare Adminstiation& Concept Principles and Objectives)

<u>समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धांत (Principles of Social Welfare)</u> – समाज कल्याण प्रशासन शब्द का उपयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता है। मुख्य रूप से इसका उपयोग कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से सम्बंधित होता है। कुछ लोगों द्वारा इसका उपयोग कार्यकारिणी और प्रबंध कार्य के रूप में किया जाता है। वास्तव में इसका प्रयोग ऐसे क्रियाकलापों के रूप में किया जाता है जिसमें किसी सामाजिक संस्था द्वारा प्रत्यक्ष सेवा उपलब्ध कराया जाता है। समाज कल्याण प्रशासन के अन्तर्गत इस प्रकार नीति निर्धारण, नियोजन, कार्यवाही नेतृत्व एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण, डेली रूटीन रिकार्ड और अभिलेखीकरण आदि कार्य आते हैं।

समाज कल्याण प्रशासन सरकारी या गैर सरकारी संस्थाओं के द्वारा परित्यक्त बच्चों की देखभाल, अपराधियों के साथ व्यवहार मानसिक रोगियों के उपचार आदि क्रियाकलापों के लिए मुख्य रूप से कार्य करता है। यह एक तरह से स्वयं में समाज कल्याण संगठन है। व्यक्तियों, समूहों और समुदायों की सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के लिए समाज कार्य के विषयों, व्यक्तिगत समाज कार्य, समूह समाज कार्य एवं सामुदायिक संगठन

के अतिरिक्त औषधि विज्ञान, कानून प्रबंधन एवं सांख्यिकी का सहारा लिया जाता है। समाज कल्याण प्रशासन का क्षेत्र बहुत व्यापक है किन्तु प्रशासन के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रमुख विषयों पर ध्यान दिया जाता है।

1. कार्मिकों का चयन एवं वर्गीकरण

2. निधि का प्रबंध

3. संचार व्यवस्था

4. अभिलेख

5. जन सम्पर्क

6. व्यावसायिक सेवाएँ

7. नियोजन।

समाज कल्याण सेवाओं के प्रशासन के लिए कोई प्रशासकीय मापदंड निर्धारित नही है। अलग–अलग एजेसिंयाँ अपने प्रशासकीय ढांचे को खड़ा कर लेती हैं। समाज कल्याण प्रशासन के लिए कुछ मुख्य बातों की ओर ध्यान दिया जाता है।

(1) समाज कल्याण एजेंसी के उद्देश्यों और कार्यों का स्पष्ट रूप से वर्णन होना चाहिए।

(2) वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित कार्यक्रम होना चाहिए। इसका भूक्षेत्र और सीमा का निर्धारण होना चाहिए। समुदाय व संशाधनों, प्रतिरूपों एवं कल्याण की आवश्यकताओं के अनुरूप ही प्रशासन की व्यवस्था की जाती है। प्रशासन में स्थिरता नहीं अपितु गतिशीलता होनी चाहिए जिससे कि परिवर्तित होने वाले आवश्यकताओं ॆब्म्छ को स्थान प्राप्त हो सके।

(3) एक सुसंगठित अभिकरण को ही समाज कल्याण प्रशासन की आवश्यकता हो सकती है। संस्था के नीति निर्माण और क्रियान्वयन में अन्तर होना चाहिए। एक प्रशासकीय अधिकारी या निकाय के ही आदेश से कार्य होना चाहिए। प्रशासन की योजना के अनुसार कार्यों का तर्कयुक्त विभाजन होना चाहिए। दायित्व का स्पष्ट एवं सुनिश्चित समुदेशन तथा संगठन की सभी इकाइयों एवं स्टाफ में समन्वय होना चाहिए।

(4) एजेंसी में उचित कार्मिक नीतियाँ एवं कार्य दशाएँ होनी चाहिए। नियुक्ति योग्यता के आधार पर होना चाहिए तथा समुचित वेतन का प्राविधान होना चाहिए। कर्मचारियों में भावात्मक एवं गुणात्मक अनुपात सही होना चाहिए।

(5) समाज कल्याण अभिकरण मानव सेवा के लिए बने हैं इसलिए उन्हें व्यक्तियों की समस्याओं और आवश्यकताओं की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। इसके साथ ही इसमें स्वतंत्रता, समानता और एकता की प्रजातांत्रिक भावना होनी चाहिए।

(6) उचित जनसम्पर्क के निर्माण के लिए सभी के लिए विधि और मनोवृत्ति का विकास होना चाहिए।

(7) अभिकरण का वार्षिक बजट होना चाहिए लेखा की सही प्रणाली होनी चाहिए तथा किसी व्यावसायिक व्यक्ति या संस्था द्वारा लेखा का परीक्षण होना चाहिए।

(8) अभिलेखीयकरण या Documentation सही प्रकार से होना चाहिए जिससे कि भविष्य में उसका उपयोग किया जा सके।

(9) लिपिकीय एवं अनुरक्षण सेवाएँ मात्रा एवं गुण में पर्याप्त तथा क्रियान्वयन में दक्ष होना चाहिए।

(10) स्वमूल्यांकन संस्था के लिए अत्यंत आवश्यक होता है। गत वर्ष की सफलताओं, असफलताओं, वर्तमान स्थिति एवं कार्यक्रम, उद्देश्यों एवं स्थापित आदेशों के अनुसार कार्यों का निष्पादन आदि, कमजोरी, वर्तमान समस्याओं तथा सेवा का बेहतर बनाने के लिए नए उपायों का लेखा–जोखा होते रहना चाहिए।

समाज कल्याण प्रशासन एक व्यवसाय के रूप में (Social Welfare Administration as a Profesion) :–

समाज के कल्याण के लिए पहले गरीबो, बीमारों, अपाहिजों तथा निराश्रितों के प्रति दया भाव से कुछ लोग सहायता कर दिया करते हैं। ये सारे कार्य निःस्वार्थ भाव से करुणा और दया से प्रेरित होकर किए जाते थे। अब समाज की समस्याओं का दया और करुणा से समाधान नही हो सकता। आज के कल्याणकारी राज्य का यह दायित्व हो जाता है कि वह गरीबों, पिछड़ों, दलितों, महिलाओं, बच्चों, निराश्रितों और असहायों की समस्याओं और आवश्यकताओं की ओर ध्यान दे। समाज कल्याण कार्यक्रम का यही क्षेत्र है। इसके लिए सुयोग्य एवं प्रशिक्षित कल्याण कर्मियों की आवश्यकता होती है। दक्ष और प्रभावशाली सेवा कार्य के लिए व्यावसायिक स्तर पर प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। स्वयंसेवी संगठनों और राजकीय कल्याण एजेंसियों को इसके सफल संचालन के लिए व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है। इसलिए समाज कल्याण प्रशासन को एक व्यवसाय के रूप में देखा जाता है।

व्यवसाय की परिभाषा (Definition of Profession) – कॉर स्टैण्डर्स एवं विलसन (Carr Satunders and Wilson)के अनुसार व्यवसाय विशेष प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त एक बौद्धिक प्रविधि है जिसका दैनिक जीवन के किसी भी क्षेत्र में प्रयोग किया जा सकता है।৳ टाल्कट पारसन्स (Talcott Parsons) के अनुसार "व्यवसाय सामान्य रूप से समाज में मूल्यवान समझे जाने वाले कुछ एक कार्यों का निष्पादन एवं क्रिया–कलापों द्वारा पूर्ण कालिक कार्य के लिए आजीविका अर्जित करना है।'' हावर्ट ग्लैडल्सटीन (Haward Gladsteen) के विचारों में, ''व्यवसाय की पहचान का अन्तिम मापदण्ड इस तथ्य में निहित है कि किसी सामाजिक आवश्यकता की पूर्ति में इसका क्या विशेष स्वरूप है।''

व्यवसाय के तत्व (Elements of a Profession)

जनहित के प्रति क्रियाशील होने तथा अपनी मापदण्डों को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाने को व्यवसाय कहते हैं। Greenwood ग्रीनवुड ने व्यवसाय के प्रमुख तत्व निम्नलिखित बतलाया है– (1) क्रमबद्ध सिद्धांत (2) ग्राहकों में विश्वास निर्माण (3) सामुदायिक स्वीकृति (4) नैतिक आचार संहिता एवं (5) व्यावसायिक संस्कृति।

कुछ विद्वानों ने समाज कल्याण को पूर्ण व्यवसाय का स्तर देने का विरोध किया । विरोधियों का तर्क रहा है समाज कल्याण वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित नही है। इस समय समाज कल्याण अविकसित था और सैद्धांतिक ज्ञान पर आधारित था, निश्चित रूप से औषध विज्ञान, विधि विज्ञान, और अभियांत्रिकी की भांति इसे सुव्यवस्थित व्यवसाय का दर्जा प्राप्त नही है।

किन्तु आज यह बलपूर्वक कहा जाता है कि समाज कार्यकर्ताओं को अपने लाभार्थियों से सम्मान प्राप्त है। सार्वजनिक और नीजी समाज कल्याण संस्थाओं में समाज कार्यकर्ताओं की नियुक्ति इस बात का सबूत है कि समाज कल्याण और समाज कार्यकर्ता वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उपयोग करता है और उसे व्यावसायिक का स्थान प्राप्त हो। समाज कल्याण के क्षेत्र में व्यवसायिकों को प्रशिक्षित किया जाता है. उनकी अपनी एक आचार संहिता है। समाज कार्यकर्ताओं के लिए मानवता एवं समाज के प्रति रुचि एवं समर्पण की भावना पर बल दिया जाता है। ठतवूद (ब्राउन) के अनुसार समाज कल्याण ध् समाज कार्य व्यवसाय की सारी अपेक्षाओं को पूरा करता है। ग्रीनवुड (Greenwood) ने भी समाज कार्य को एक पूर्ण व्यवसाय का दर्जा दिया है। समाज कज्याण कार्यकर्ताओं की अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा तथा अन्य विकसित देशों में बहुत मांग है तथा उन्हें विभिन्न संस्थाओं एवं निकायों में रोजगार भी प्राप्त हो रहा है। जिससे यह पुष्टि हो जाती है कि यह एक विकसित व्यवसाय के रूप में कार्य कर रहा है। इस व्यवसाय की मान्यता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय समाज कार्यकर्ता संस्था 1932 आदि ऐसी संस्थाएँ हैं जो समाजकार्य को एक व्यवसाय के रूप में महत्वपूर्ण स्थान दिलाती है।

सामाजिक सेवाओं का विशेष उद्देश्य है मानव की सहायता करना इसलिए इसका प्रशासन व्यापार और उद्योग जैसे संस्थाओं से अलग होता है। अन्य सार्वजनिक सेवाओं से जो मानव व्यवहार से सीधे नही जुड़ी है, से अलग इसका प्रबंधन होता है। सामाजिक कल्याण प्रशासन में नीतियों की स्थापना प्राथमिक रूप से समाज कल्याण के राजकीय विभागों द्वारा राज्य स्तर पर किया जाता है तथा संस्थाओं के कोई या कार्यविशेष द्वारा या निदेशक के द्वारा किया जाता है।

समाज कल्याण की आवश्यकता (Needs of Social Welfare)

किसी व्यक्ति, समूह या समुदाय को चेतना प्रदान करना एवं जागरूकता पैदा करना जिससे कि वह अपनी सहायता स्वयं कर सके को समाज कल्याण कहा जाता है। पूर्व में समाज कल्याण से तात्पर्य केवल शक्तिशाली और सम्पन्न लोगों द्वारा निर्बलों की सहायता करना था किन्तु सामाजिक विकास की वर्तमान स्थिति में ''जनता की सहायता करना ताकि वह स्वयं अपनी सहायता कर सके'' को समाज कल्याण कहा जाता है। भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में स्पष्ट उल्लेख है कि राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था

जिसमें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं को अनुप्राणित करें और कार्य साधक के रूप में स्थापना और संरक्षण कर लोक कल्याण का प्रयास करेगा। सामाजिक सेवाएँ वे सेवाएँ हैं जो राज्य द्वारा समस्त सनाज को दिया जाता है किन्तु समाज कल्याणऐसी सेवाएँ हैं जो समाज में विशेष सहायता प्राप्ति की आवश्यकता रखने वाले निर्बल, शोषित, असहायों, विगलांगों आदि की सहायता करती है।

विलियम वेवरिज (William Beveridge) ने समाज कल्याण की आवश्यकता की व्याख्या करते हुए बतलाया है कि समाज का प्रत्येक नागरिक पांच दानवों से अपनी सुरक्षा चाहता है, वे हैं–

1. अभाव (Want)

2. अज्ञान (Ignorance)

3. बेरोजगारी (Unemployment)

4. बीमारी (Disease)

5. गन्दगी (Sqalous)

भारत एक कल्याणकारी राज्य है इसलिए उसे समाज के सभी वर्गों के कल्याण के लिए कार्य करना और उपर्युक्त पांचो दानवों से प्रत्येक व्यक्ति को मुक्त करना है।

भारत सरकार समाज कल्याण के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्यक्रमों का संचालन पांचों दानवों से मुक्ति दिलाने के लिए करती है–

1. <u>अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा (Provision of Compulsory Primary Education)</u> –
अज्ञानता एक बहुत बड़ा दानव है जिससे मुक्ति के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है शिक्षा के अभाव में किसी भी प्रकार का विकास एवं कल्याणकारी कार्य बेमानी है। भारत सरकार सबके लिए शिक्षा का अधिकार कानून के अन्तर्गत भारत से निरक्षरता समाप्त करने के लिए कृत संकल्प है। इस ओर केन्द्र सरकार और राज्य सरकार प्रयासरत है किन्तु अनेक ऐसी कमियाँ हैं जिनसे प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता बाधित हो रही है। अधिकारियों, अध्यापकों और समाज के लोगों में शिक्षा के प्रति अभी वह धारणा नहीं बन रही है जिसकी आवश्यकता है। सरकारों का जोर नियुक्तियों पर और ढांचागत संरचनाओं पर है। अधिकारी अपनी नौकरी कर रहा है और अध्यापक विद्यालय से दूर ही रहना चाहता है। समाज के लोग भी तमाशबीन है। सरकार का लक्ष्य अवश्य पूरा होगा किन्तु शिक्षा की गुणवत्ता में कोई सुधार नहीं दिख रहा है।

2. <u>सम्पूर्ण रोजगार (Full Employment)</u> –रोजगार की समस्या भारत के सभी वर्गों में व्याप्त है। बेरोजगारी के साथ ही अर्द्ध बेरोजगारी भी एक विकराल समस्या है। देश के विभिन्न भागों में रोजगार के अभाव में युवाओं में मनोविकार उत्पन्न होना स्वाभाविक है जिसके कारण अलगाववाद, नक्सलवाद और कहीं–कहीं अराजकतावाद की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है। भारत सरकार रोजगार के लिए अनेक योजनाओं का संचालन करती है

जिसमें रोजगार आवश्वासन योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना और महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार योजना आदि सम्मिलित है।

3. **<u>महिला और बाल कल्याण (Welfare of Women and Children)</u>** – महिला और बच्चे निर्बल वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नही है। पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करने में वे अपने खान–पान, रहन–सहन, स्वास्थ्य और पोषण पर ध्यान नहीं देती। जिसके कारण महिलाओं में कुपोषण और मातृ मृत्युदर अधिक है। भारतीय संविधान महिलाओं का समान दर्जा अवश्य देता है लेकिन गांवों में महिलाओं की स्थिति अच्छी नही है। इसलिए पुरुषों से अधिक कार्य करती हैं किन्तु उनके कार्यों का कोई मूल्यांकन नही होता। वे काम करती हैं उसके बदले कोई पारिश्रमिक नही पाती हैं। उत्पादकता में उनका योगदान है पर बाजार में उस कार्य का मूल्यांकन नही होता। भारत सरकार ने महिलाओं के कल्याण के लिए अनेक कार्यक्रम चालाए हैं।

महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा विभिन्न योजनाएँ चलायी जा रही हैं जिनमें मुख्य रूप से–

1. महिला उत्थान से सम्बंधित राष्ट्रीय नीति का निर्धारण करना।

2. महिला को संसद और विधानसभा में 1 / 3 आरक्षण दिलाने का प्रयास करना।

3. इन्दिरा महिला योजना एवं महिला समृद्धि योजना का क्रियान्वयन।

4. राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा महिलाओं का अधिकार की रक्षा करना।

5. राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना एवं गरीब और जरूरतमंद महिलाओं की सहायता करना।

6. महिलाओं के लिए प्रशिक्षण एवं रोजगार के कार्यक्रमों का संचालन करना।

7. कामकाजी महिला छात्रावास, रोजगार उत्पादन केन्द्र का संचालन तथा महिलाओं से सम्बंधित आंकड़ों का संकलन करना।

महिलाओं की विकास योजनाओं के साथ ही किशोरी शक्ति जागरण के भी कार्यक्रम सरकार द्वारा चलाया जा रहा है।

<u>बाल कल्याण (Child Welfare)</u>

भारतीय संविधान सभी नागरिकों के कल्याण के लिए कटिबद्ध है। बच्चे किसी राष्ट्र की धरोहर होते हैं। डी०पाल० चौधरी के अनुसार जो देश जितना ही गरीब होगा वहाँ बाल कल्याण के कार्यों की उतनी ही अधिक आवश्यकता होगी। भारत में स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, शिक्षण, प्रशिक्षण, बच्चों की उचित देखभाल की आवश्यकता आदि बाल कल्याण के क्षेत्र में आते हैं भारत में विकलांग बच्चों की संख्या अधिक है। यहाँ कम से कम आधे बच्चे कुपोषण का शिकार हैं।

प्राकृतिक आपदाओं के कारण भी बच्चे निराश्रित हो जाते हैं। अनाथ बच्चों तथा अन्य समस्याग्रस्त बच्चों की देखभाल आवश्यक है। भारत में बाल कल्याण के क्षेत्र में सरकारी और गैर सरकारी संगठन कार्य कर रहे हैं। 1974 में भारत में बाल नीति का निर्माण हुआ था जिसमें प्रसव से पूर्व और बाद व्यापक स्वास्थ्य योजना, पोषाहार उपलब्ध कराना, 14 वर्ष की आयु तक मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना। एक राष्ट्रीय बाल बोर्ड की स्थापना की गयी है बाल विकास परियोजना 1975 में आरम्भ किया गया, जिसके अन्तर्गत यह व्यवस्था की गयी है कि–

1. 0–6 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों को पोषाहार प्रदान करना एवं स्वास्थ्य में सुधार लाना।

2. बच्चों के मानसिक, शारीरिक और सामाजिक विकास के लिए भूमिका तैयार करना।

3. मृत्युदर, रुग्णता, कुपोषण और स्कूल छोड़ने की घटनाओं को कम करना।

4. विभिन्न विभागों में बाल विकास कार्यक्रमों के लिए समन्वय स्थापित करना।

5. बच्चों के सामान्य स्वास्थ्य और पोषाहार सम्बंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए माताओं की क्षमता का विकास करना।

राजकीय कार्यों के अतिरिक्त विभिन्न संस्थाएँ भी बच्चों के कल्याण के लिए कार्यक्रमों को संचालन करती है। ये संस्थाएँ शिक्षण प्रशिक्षण, बालकों के पुनर्वास, नेत्रहीन विद्यालय, मूक–बधिर विद्यालय, विकलांगों के लिए शिक्षण संस्थाएँ आदि के माध्यम से बाल कल्याण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। यूनिसेफ जो संयुक्त राष्ट्र संघ की संस्था के माध्यम से भी बाल कल्याण के क्षेत्र में अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। बाल कल्याण के लिए कुछ विशेष कानूनी व्यवस्थाएँ भी की गयी हैं जिसमें श्रमिक रोजगार अधिनियम, कारखाना अधिनियम, बाल श्रम अनुबंध अधिनियम आदि प्रमुख है। बच्चों के शोषण को रोकने में इन कानूनों का महत्वपूर्ण स्थान है।

4. <u>आवासीय आवश्यकताओं के लिए कल्याण (Welfare for Housing Need)</u> – मानवीय आवश्यकताओं में भोजन, वस्त्र के बाद आवास की आवश्यकता अपरिहार्य है। आवास मानव के क्रियास्थल और मानवीय क्रिया कलापों के लिए आवश्यक है। आवास ही आदमी को एक सामाजिक प्राणी का स्तर दिलाता है। आदमी जब आखेट युग के बाद में भी एक स्थान पर निवास करने लगा तभी से उसे आवास की आवश्यकता पड़ी। वर्तमान समय में आवास की आवश्यकता और भी महत्वपूर्ण हो गयी है। आवास की समस्या को देखते हुए ही 1989 को बेघरों के लिए आश्रय का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष माना गया। भारत में प्रत्येक वर्षों लाखों आवासीय भवन बनते हैं फिर भी कमी बनी हुई है। जनसंख्या वृद्धि और लोगों के आर्थिक स्तर के बढ़ने के कारण आवासों की कमी बनी रहती है। आज भी देश का एक बहुत बड़ा हिस्सा झुग्गी–झोपड़ियों में अस्वस्थकर वातावरण में सांस लेने को मजबूर हैं। अच्छे आवास का मुनष्य के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

1 आवास अच्छा होने से व्यक्ति की कार्यक्षमता में वृद्धि होती हैं और सामाजिक बुराइयों में कमी आती है।

2. अच्छे आवास में स्वास्थ्य अच्छा रहता है। गन्दे और खराब आवास बीमारियों के कारण बनते हैं।

3. आवास अच्छा न होने से उत्पादकता प्रभावित होती है।

4. अच्छे आवास बच्चों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। अच्छे आवासों में बाल मृत्युदर कम रहती है।

5. आवास का व्यक्ति के सम्मान पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

आवास समाज कल्याण कार्यक्रम का एक मुख्य विषय है। भारत सरकार और राज्य सरकारें आवास की व्यवस्था के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन कर रही हैं

5. **<u>अलाभकारी समूहों का कल्याण (Welfare of Disadvantaged Group)</u>** – समाज में कुछ व्यक्ति प्रकृतिजन्य कारणों और सामाजिक मान्यताओं के कारण अलाभकारी समूह के रूप में जाने जाते हैं। जिनमें प्रमुख हैं विकलांग, वृद्ध, दलित और अनुसूचित जनजाति समाज कल्याण की आवश्यकता सबसे अधिक इसी वर्ग समूह को है। ये शारीरिक अक्षमताओं और सामाजिक कारणों से वंचित वर्ग में आते हैं। एक लोकतांत्रिक और लोक कल्याणकारी राज्य के लिए इस वंचित वर्ग का कल्याण करना एक प्राथमिकता है देश के सर्वांगीण विकास के लिए यह आवश्यक है कि जन्मजात सामाजिक असमानताओं के शिकार लोगों का उत्थान किया जाय। भारतीय संविधान में इसके लिए अनेक प्राविधान किए गए हैं इनमें आने वाले सभी वर्ग समूहों के लिए कल्याण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं–

1. **<u>विकलांग कल्याण</u>** – विकलांगता एक प्रकृतिजन्य असमानता है। विकलांगों की समस्याएँ सामान्य जन से अलग होती हैं। इसीलिए इस क्षेत्र की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। विकलांग वह व्यक्ति है जो अपने एक या अनेक अंगों के उपयोग में पूर्णतः असमर्थ होता है या उनका आंशिक उपयोग करने में ही सक्षम होता है। विकलांग के लिए प्रशिक्षण और पुनर्वास आवश्यक है। जिससे कि वह परीजीवी बनकर अपना जीवन निर्वाह न करे। वे भी आर्थिक स्वाधीनता और जीवन की सामान्य आवश्यश्कताओं की पूर्ति चाहते हैं। इस वर्ग में– 1. गूंगे बहरे, 2. अन्धे, 3. अपंग, 4. मन्दबुद्धिके लोग आते हैं। इनके कल्याण के लिए–1. शिक्षा, 2. आवासीय संस्थाएँ छात्रावास, 3. संरक्षित निर्माण शाला, 4. प्रशिक्षण और पुनर्वास, 5. मनोरंजन, 6. आर्थिक सहायता एवं रोजगार आदि कार्यक्रम भारत सरकार तथा अन्य समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा चलाये जाते हैं।

6. **<u>वृद्धों के लिए कल्याण (Welfare of Aged)</u>** –समाज ज्यों–ज्यों समृद्ध और स्वस्थ होगा वृद्धों की मात्रा उतनी ही बढ़ती जाएगी। भारत में ही नहीं अपितु अनेक विकसित देशों में वृद्धों की संख्या में वृद्धि हो रही है। 1999 को अन्तर्राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष के रूप में मनाया गया। भारत में सन् 2000 को राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष के रूप में मनाया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी 1948 में ही वृद्धावस्था के अधिकारों के बारे में एक घोषणा पत्र तैयार किया। सामान्य जीवन के परवर्ती काल को वृद्धावस्था कहा जाता है। उसे दो रूपों में परिभाषित किया जाता है– 1. जीव वैज्ञानिक रूप में एवं 2. काल क्रमिक के रूप में।

जीव वैज्ञानिकों के अनुसार वृद्धावस्था वह अवस्था है जिसमें सामान्य रूप से वृद्ध होने के समय साथ–साथ शारीरिक और कार्यप्रणाली में ऐसे बदलाव आ जाते हैं जिन्हें बदला नहीं जा सकता। बीमारियों और अन्य कारणों से सभी लोगों में वृद्धावस्था सम्बंधी परिवर्तन दिखने लगते हैं।

कालक्रम के रूप में वृद्धावस्था वह अवस्था है जिसमें हमें जितना समय जी लिया है उसे वर्षों में आंका जाता है। उम्र को जीवन के प्रवाह में सामाजिक नियंत्रण या द्वारपाल के रूप में जाना जाता है।

भारत में भी वृद्धों की जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। वृद्धों को निम्नलिखित क्षेत्रों में सहायता की आवश्यकता है– , 1. आजीविका, 2. अर्थ, 3. स्वास्थ्य, 4. पर्यावरण एवं 5. अवकाश।

भारत सरकार ने विभिन्न योजनाओं के माध्यम से इन पांचों कायक्रमों को लागू करने का कार्य किया है। संविधान का अनुच्छेद 41 इस बात की गारण्टी देता है कि वृद्धों के कल्याण के लिए राज्य व्यवस्था करेगा। भारत में इन पांचों क्षेत्रों में वृद्धों की सहायता के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया है–

1. वृद्धावस्था पेंशन योजना।

2. कई राज्य भी अलग से पेंशन योजनाएँ चलाते हैं।

3. अन्नपूर्णा योजना के माध्यम से बुजुर्गों को 10 किलोग्राम मुफ्त राशन।

4. पेंशनरों परिवार पेंशनरों को नियमित महगाई भत्ता देना।

5. आयकर में छूट।

6. जन आरोग्य योजना में इलाज का भारी खर्च उठाने में बुजुर्गों की सहायता।

7. बैंकों द्वारा सामान्य जन से अधिक व्याज की सुविधा।

8. वरिष्ठ नागरिकों को रेल भाड़े में 30 प्रतिशत तक की छूट।

शासकीय व्यवस्था के अतिरिक्त अनेक ऐसी संस्थाएँ हैं जो बुजुर्गों के कल्याण के लिए कार्य करती हैं। हेल्पेज इन्डिया अनेक कार्यक्रमों का संचालन कर बुजुर्गों को रोजगार से जोड़ने का काम करती हैं।

दलितों का कल्याण (Welfare of Dalit)

दलित से आशय समाज के उस वर्ग से है जो संविधान की अनुच्छेद 341 (1) दूर तथा (2) के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों में रखे गए हैं। इनके पिछड़ेपन को करने के लिए सरकार विभिन्न योजनाओं का संचालन करती है तथा शिक्षा और नौकरियों में आरक्षण प्रदान करती है। संविधान में दिए गए सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता तथा अवसर की समानता के लिए अनेक कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है। स्वतंत्रता के पूर्व महात्मा गांधी,

ज्योतिबा फूले आदि समाज सुधारकों में दलित कल्याण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15, 16, 17, 29, 38, 48,330, 332, 334 तथा 164 में दलितों के कल्याण की बात की गयी है और उसी के अनुरूप अनेक कानून बनाए गए हैं।

दलितों के कल्याण के लिए भारत सरकार द्वारा अनेक सहायता कार्यक्रम चलाए जाते हैं जिनमें प्रमुख हैं–

1. सरकारी नौकरियों में आरक्षण

2. निःशुल्क शिक्षा और छात्रवृत्ति

3. अस्पृश्यता अपराध अधिनियम के अन्तर्गत छुआछूत मिटाना

4. स्वंयसेवी संस्थाओं को आर्थिक सहायता देकर विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का संचालन

5. कृषि भूमि आवास भूमि का आवंटन एवं ऋण अनुदान की व्यवस्था करना।

<u>जनजातियों के लिए कल्याण (Welfare of Tribals)</u> – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार प्राप्त है कि वह किसी भी पिछड़े हुए आदिम समुदाय को अनुसूचित जनजाति घोषित करे। इस अनुच्छेद के अन्तर्गत एक सूची तैयार की गयी है। जिन्हें अनुसूचित जनजाति कहा जाता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 330 तथा 332 के अन्तर्गत लोकसभा तथा विधानसभाओं में जनजातियों के लिए सीट सुरक्षित रखी गयी है। पंचायतों में भी जनजातियों के लिए जनसंख्या व अनुपात में आरक्षण दिया गया है। संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद 47 के अनुसार राज्य जनजातियों की शिक्षा उन्नति और हितों की रक्षा के लिए विशेष ध्यान देता है। जनजातियों पर अत्याचार रोकने के लिए कानून का निर्धारण किया गया है। अनेक विकास कार्यक्रमों में प्रशिक्षण, रोजगार तथा ऋण अनुदान किया गया है। अनेक विकास कार्यक्रमों शोषण से बचाव के लिए 1987 में जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ की स्थापना की गयी है।

<u>स्वास्थ्य रक्षक आवश्यकताएँ (Health Care Need)</u> :–

समाज कल्याण के क्षेत्र में नागरिकों के स्वास्थ्य रक्षा की आवश्यकता होती है। स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण पक्ष है। शारीरिक, मानसिक क्षमता का संतुलित विकास करना स्वास्थ्य रक्षा के अन्तर्गत आता है। समाज का यह दायित्व है कि यह अपने नागरिकों को वे सारी सुविधायें प्रदान करे। जिससे जनता के स्वास्थ्य को सुरक्षित और विकसित किया जा सके।

अशिक्षा और अज्ञानता के कारण भारत में आज भी जादू टोना टोटका पर विश्वास अधिक है। प्रतिरोधक औषधियों तथा टीका की अपेक्षा लोग अवैज्ञानिक तरीके अपनाते हैं जिसके कारण स्वास्थ्य की समस्या उत्पन्न होती है। भारत में बाल मृत्युदर और मातृ मृत्युदर अधिक है। इसका कारण अवैज्ञानिक पद्धतियों से इलाज और प्रसव की व्यवस्था है। अर्द्धपोषण और कुपोषण भी भारत में बहुत अधिक है जिसके कारण स्वास्थ्य समस्याएँ बहुत अधिक हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य की रक्षा के लिए भारत सरकार द्वारा निम्नलिखित कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

(1) खाद्य मिलावट निवारण अधिनियम (Prevention of Food Adulteration Act) 1954

(2) वातावरणीय आरोग्यशास्त्र (Environmental Hygine) – स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति, जल की निकासी का प्रबंध सरकार द्वारा किया जाता है। जिससे कि लोगों के स्वास्थ्य की सुरक्षा की जा सके।

(3) पंचवर्षीय योजनाओं के कार्यक्रम –शहरों और गांवों में स्वच्छ आवास व्यवस्था के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये जाते हैं। झुग्गी–झोपड़ियों और गन्दी बस्तियों का उन्मूलन, कच्चे शौचालयों की समाप्ति आदि की सुविधा प्रदान करने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में प्राविधान किया गया है।

(4) संक्रामक रोगों पर नियंत्रण (Control of Infectious Disease) – मलेरिया उन्मूलन, क्षयरोग नियंत्रण, आयोडीन की कमी को दूर करने की व्यवस्था, कुष्ठरोग नियंत्रण तथा टीकारण आदि संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए चलाए जा रहे हैं।

(5) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना

(6) स्वस्थ्य गृह योजना

इकाई–4

विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण प्रशासन (Social Welfare Administiotion at Diffirent Levels) :–

प्राचीन काल में समाज कल्याण को व्यक्तिगत मुक्ति मोक्ष प्राप्ति और पुण्य अर्जित करने के लिए लोग करते थे। विद्वानों के लेखों, विचारकों एवं संतो की चाणियों, पद्धतियों एवं व्यवहारों में समाज कल्याण की भावना का परिचय मिलता है। लोग विभिन्न माध्यमों से गरीबों, असहायों और जरूरतमंदों की सहायता करने में अपने को पुण्य का भागीदार मानते थे। यह सब अनौपचारिक और स्वैच्छिक प्रक्रिया थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् समाज कल्याण एक औपचारिक पद्धति के रूप में बदल चुका है। भारतीय गणतंत्र अब सभी को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय दिलाने के लिए प्रतिबद्ध है। भारतीय संविधान सामाजिक न्याय दिलाने के लिए प्रतिबद्ध है राज्य की नीति निर्देशक तत्वों एवं संविधान की अनेक धाराओं को देखने से यह स्पष्ट है कि समाज के उस वर्ग के लिए जिसे सामाजिक न्याय की आवश्यकता है कल्याण कार्यो का स्पष्ट प्राविधान है।

राज्य को यह अधिकार है कि वह असमानताओं, हानियों और अकल्याण की स्थिति से उबारने के लिए नियम बनाए अनुदान आदि का वितरण करे, इस तरह समाज में स्त्रियों, बच्चों, युवाओं, बूढ़ों अशक्तों, विकलांगों, पिछड़े वर्गों, जातियों और कबीलों आदि के लिए सामाजिक सेवाएँ उपलब्ध कराना राज्य की जिम्मेदारी है जिसका विस्तार अनेक स्तरों पर हुआ है। समाज कल्याण के क्षेत्र में केन्द्र और राज्य सरकारों के अतिरिक्त स्वयंसेवी संगठनों की भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। सरकार इन संगठनों को सहायता से विभिन्न समाज कल्याण कार्यक्रमों को संचालित करती है। समाज कल्याण के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण सेवाएँ उपलब्ध हैं।

केन्द्रीय कल्याण मंत्रालय : आरम्भ में कल्याण मंत्रालय किसी विभाग के एक भाग के रूप में, या स्वतंत्र विभाग के रूप में या संयुक्त विभाग के रूप में कार्यकरता रहा। 1964 में समाज प्रतिरक्षा से सम्बंधित कार्यों शिक्षा ग्रहकार्य, स्वास्थ्य, श्रम, वाणिज्य और उद्योग आदि एक विभाग की स्थापना हुई। 1966 में समाज प्रतिरक्षा विभाग को समाज कल्याण विभाग का नाम दिया गया। 1979 में इसे समाज कल्याण मंत्रालय का दर्जा प्राप्त हुआ जिसका नाम शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय रखा गया। समाज कार्य अधिवेशन ने 1956 में प्रधानमंत्री को स्वतंत्र समाज कल्याण मंत्रालय की स्थापना के लिये ज्ञापन दिया गया जिसमें यह मांग की गयी थी कि समाज कल्याण सम्बन्धी कार्य को समोकित रूप से किया जाना चाहिए।

विषयों का बंटवारा

केन्द्रीय कल्याण मंत्रालय के पास विभिन्न कार्य हैं। इनकी एक लम्बी सूची है। इस सूची के अतिरिक्त भी अनेक ऐसे कार्य हैं जो कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत आने चाहिए थे लेकिन वे दूसरे विभागों के पास है केन्द्रीय मंत्रालय के अन्तर्गत 32 कार्य हैं जिनकी सूची निम्नलिखित हैं–

1. इन्डो यू.एस. इण्डो यूके, इण्डो स्विस और इण्डो स्वीडिश समझौते लागू करना।

2. समाज प्रतिरक्षा और समाजिक बीमा।

3. विकलांगों व बेरोजगारों को राहत।

4. समाज कल्याण नियोजन, परियोजना निर्माण, शोध मूल्यांकन, आंकड़े और प्रशिक्षण।

5. समाज प्रतिरक्षा से सम्बंधित विषयों में दूसरे देशों के साथ सम्बंध और अपराधों की रोकथाम ।

6. जरूरतमंद बच्चों यतीमों और यतीमखानों की देखरेख और विकास के लिए संस्थागत और गैर संस्थागत सेवाएँ।

7. शारीरकि और मानसिक रूप से विकलांगों की शिक्षा प्रशिक्षण, पुनर्वास के कल्याण ।

8 शारीरिक रूप से विकलांगों और मनोरोगियों के लिए राष्ट्रीय संस्था ।

9. दृष्टिहीनों के लिए राष्ट्रीय केन्द्र जिसमें देहरादून का ब्रेल प्रेस सम्मिलित है प्रौढ़ वृद्धों के लिए प्रशिक्षण केन्द्र और आंशिक रूप से बहरे बच्चों के लिए स्कूल सम्मिलित हैं।

10. सामाजिक व नैतिक स्वास्थ्य केन्द्र।

11. भीक्षावृत्ति, युवा आवारागर्दी, और अपराध।

12. युवा अपराधियों को प्रोवेशन।

13. शोध मूल्यांकन, प्रशिक्षण, ज्ञान का आदान प्रदान का सुधारात्मक सेवाओं सहित सभी सामाजिक प्रतिरक्षा सेवाएँ।

14. नशबंदी।

15. नशाखोरी के शैक्षिक और समाज कल्याण सम्बंधी पक्ष।

16. मंत्रालय को सौंपे गए विषयों से सम्बंधित दान और धार्मिक Endowment

17. स्वैच्छिक प्रयास को बढ़ावा तथा विकसित करना ।

18. समाज प्रतिरक्षा की राष्ट्रीय संस्था ।

19. कृत्रिम अंग निर्माण कारपोरेशन ऑफ इन्डिया कानपुर।

20. इस सूची के विषयों में से किसी एक के साथ सम्बद्ध सभी दूसरी संस्थाएँ।

21. अपराधियों को प्रोवेशन अधिनियम 1958 और शिशु अधिनियम 1961।

22. अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित कबीले अधिसूचित घूमंतू जातियाँ, अर्ध घुमंतू जातियाँ, दूसरी पिछड़ी श्रेणियाँ तथा इनसे सम्बंधित छात्रों को छात्रवृत्ति ।

23. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति, त्यागपत्र, आदि तथा विशिष्ट अधिकारी के प्रतिवेदन।

24. अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का विकास।

25. पिछड़ी श्रेणियों की स्थितियों की छानबीन के लिए नियुक्त समिति का प्रतिवेदन।

26. अनुसूचित क्षेत्र तथा उससे सम्बंधित राज्यपालों द्वारा बनाए गए नियम।

27. अनुसूचित क्षेत्रों का प्रशासन तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण पर बनाए गए आयोग को प्रतिवेदन तथा किसी प्रदेश में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए अपेक्षित योजनाओं का निर्माण करने के सम्बंध में निर्देश।

28. भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए विशिष्ट अधिकारी की नियुक्ति, त्यागपत्र प्रतिवेदन एवं तत्सम्बन्धी सारे विषय।

29. अल्पसंख्यकों की समिति से सम्बंधित सभी विषय।

30. वक्फ ऐक्ट 1954 (1954 का 29)।

31. Evque सम्पत्ति एक्ट 1950 के प्रशासन के अन्तर्गत वक्फ सम्बन्धी विषय में कार्य।

32. दरगाह ख्वाजा साहब ऐक्ट 1956 के 36 का प्रशासन।

केन्द्रीय प्रशासनिक संगठन
(Central Administtrative Organization)

विभाग दो हिस्सों में विभक्त है। एक कल्याण सचिव और दूसरा महिला एवं शिशु सचिव। कल्याण सचिव के साथ सहायक सचिव होते हैं कल्याण के विभिन्न पक्षों को देखते हुए विभाग सात खण्डों में विभक्त है। वित्तीय खण्ड, विकलांग कल्याण, अल्पसंख्यक खण्ड अनुसूचित जाति विकासखण्ड समाज प्रतिरक्षा और शिशु कल्याणखण्ड, जनजाति विकासखण्ड तथा वक्फखण्ड। इन सभी खण्डों निदेशकों, उपसचिव, अधिसचिव, संयुक्त निदेशक तथा अधिकारी होते हैं। मंत्रालय के कार्य को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए लोक सभा सदस्यों की परामर्श समिति होती है जो मंत्रालय से सम्बंधित विषयों को पुनरीक्षित करती है।

मंत्रालय के अन्तर्गत कई अधीनस्थ संगठन, राष्ट्रीय समितियाँ और राष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना की गयी है। जिससे मंत्रालय के कार्यों में सहायता प्राप्त होती है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए राष्ट्रीय समिति, अल्पसंख्यक आयोग समाज प्रतिरक्षा की राष्ट्रीय संस्था, जनसहयोग एवं राष्ट्रीय शिशु विकास संस्थान, नेत्रं रोग पीड़ितों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, विकलांग कल्याण संस्थान, पुनर्वास प्रशिक्षण एवं शोध का राष्ट्रीय संस्थान, बधिरों के लिए अली यावरजंग राष्ट्रीय संस्थान, मनोरोगियों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, अनुसूचित जातियों एवं

जनजातियों के लिए आयुक्त, भाषाई अल्पसंख्यक आयुक्त, कृत्रिम अंग निर्माण निगम, मार्केटिंग विकास संघ आदि इसी प्रकार के संगठन और संस्यायें हैं।

मंत्रालय के कार्यकलाप (Activities of the Mimistry)

(1) समाज के अनेक वर्गों का कल्याण रू इन वर्गों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक, विकलांग, स्त्रीयों और बच्चे, युवा, वृद्ध नागरिकों का कल्याण आदि आता है।

(2) कार्यक्रमों की नीति योजना और क्रियान्वयन विकास की अपेक्षा रखने वाले अनेक वर्गों के कल्याण के लिए नीति निर्धारण, योजना बनाना एवं क्रियान्वित करना।

(3) केन्द्रीय एवं केन्द्र द्वारा अपनायी गयी योजनाओं का संचालन महिलाओं के लिए क्रियात्मक साक्षरता प्रौढ़ महिलाओं के लिए जागरूकता और शिविर सामाजिक, आर्थिक कार्यक्रम, कामकाजी महिलाओं के लिए आवास विकलांगों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, विकलांगों के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं को सहायता, समाज शिक्षा तथा प्रशिक्षण, शिशुगृह आदि।

(4) प्रदेशों को मार्गदर्शन एवं निर्देश

(5) योजना आयोग के साथ मेजजोल

(6) प्रादेशिक मंत्रियों एवं सचिवों का अधिवेशन

(7) आवश्यकतानुसार आयोग संगठनों समिति एवं अध्यपन दलों का गठन करना

(8) स्वैच्छिक संस्थाओं को सहायता

(9) सूचना एवं सर्वजन शिक्षा कार्य

(10) प्रकाशन

(11) शोध मूल्यांकन एवं प्रमाणीकरण

(12) द्विपक्षीय समझौता का संचालन

(13) अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशनों, सम्मेलनों और कार्यशालाओं में भाग लेना।

महिला एवं शिशु कल्याण विभाग मानव संशाधन विकास मंत्रालय (Department of Women and Child Development&Ministry of Human Resource Develoment) :–

1985 में केन्द्रीय मंत्रालयों का पुनर्गठन हुआ है जिसमें मानव संशाधन विकास मंत्रालय बना उसी समय से महिला एवं बाल विकास मानव संशाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत आ गया जिसका एक राज्यमंत्री होता है। उस विभाग में दो व्यूरो होते हैं– (1) पोषक आहार और शिशु विकास। (2) महिला कल्याण और विकास केन्द्रीय समाज कल्याण

बोर्ड (CSWB) और जनसहयोग तथा शिशु विकास राष्ट्रीय संस्थान (NIPCCD) ये दोनों संस्थाएँ विभाग को उसके कार्यों में कुछ सहायता करते हैं बाकी सारे कार्यक्रम स्वयंसेवी संगठनों द्वारा चलाए जाते हैं। विभाग के पास परिवार कल्याण, महिला और शिशु कल्याण और इस विषय से सम्बंधित अन्य मंत्रालयों के कार्यों का समन्वय, देखभाल, राष्ट्रीय पोषक आहार कार्यक्रम, महिलाओं को पोषक आहार के सम्बंध में समन्वय विभाग को सौंपे गए दान और धार्मिक एन्डाउमेंट, स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देना महिलाओं और लड़कियों के अनैतिक व्यापार को रोकने सम्बंधी कानून 1956 का प्रशासन, अमेरिकीराहत के लिए कार्यों का समन्वय, शोध, मूल्यांकन, परियोजना निर्माण महिलाओं और बच्चों से सम्बंधित आंकड़े, यूनिसेफ (UNICEF) केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, जनसहयोग और शिशु विकास संस्थान आदि कार्य हैं।

<u>प्रान्तीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन (SocialWelfare Administration at State Level)</u> :—

केन्द्रीय सरकार ने करीब—करीब समाज कल्याण से सम्बंधित योजनाओं के संचालन की जिम्मेदारी स्वयं लिया है फिर भी राज्य सरकारें अपनी तरफ से कुछ योजनाओं का संचालन करती हैं बच्चे, महिलाएँ, अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, पिछड़े वर्ग, विकलांग, वृद्ध, बेरोजगार जरूरतमंद, परित्यक्त तथा निराश्रित आदि लोगों के लिए राज्य सरकारें कार्यक्रमों का संचालन करती हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् सभी प्रदेशों ने या तो समाज कल्याण विभाग की स्थापना किया है और कुछ ने किसी न किसी मंत्रालय से समाज कल्याण कार्यक्रमों को सम्बद्ध कर दिया है। समाज कल्याण विभाग के अतिरिक्त कई राज्यों में अलग—अलग विभागों द्वारा कल्याण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, महिला एवं शिशु कल्याण विभाग, गृह विभाग (युवा अपराध और शिक्षा) जेल विभाग (कैदियों का कल्याण) पुलिस विभाग (अनैतिक दमन) शिक्षा विभाग (विकलांगों की शिक्षा) श्रम विभाग (श्रम कल्याण) स्वास्थ्य विभाग (मातृ और शिशु स्वास्थ्य रक्षण) अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जाति विभाग (इन जातियों का कल्याण) ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग (ग्रामीणों के कल्याण के लिए कार्यक्रमों का संचालन करते हैं।

स्थानीय स्तर पर कल्याण रू स्थानीय नगरीय एवं ग्रामीण विकास अधिकारियों द्वारा कल्याण कार्याक्रम देश में बलवन्त राय मेहता कार्यवाही रिपोर्ट और श्री राजीव गांधी के शासनकाल में संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज की व्यवस्था प्रत्येक राज्य में है। किसी राज्य में यह द्विस्तरीय है और कुछ राज्यों में त्रिस्तरीय। पंचायती राज संस्थाओं को भी अपने स्तर पर समाज कल्याण का कार्य करने का प्राविधा रखा गया है। पंजाब में पंचायतें सूचना समुदाय एव मनोरंजन केन्द्र, युवाकेन्द्र, महिला मण्डल किसान क्लब आदि का आयोजन कर समाज कल्याण कार्य करती हैं। आन्ध्र प्रदेश में ग्रामीण गृह योजनाएँ, छुआछूत नियंत्रण, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के लिए कार्यक्रम, बीमार भिखारियों के ग्रहों की व्यवस्था करना आदि कार्य करते हैं। गुजरात में तालुका पंचायतों को ग्रह निर्माण, नशाबन्दी, महिलाओं और बच्चों के कल्याण, दस्तकला केन्द्र भिखारियों के लिए घरों का निर्माण कार्यक्रमों को चलाने की अनुमति दी गयी है। उत्तर प्रदेश में जिला परिषदों की कार्य सूची में समाज कल्याण की बात की गयी है। पंचायती राज संस्थाओं को भी कल्याण कार्यक्रमों को चलाने के लिए पूरी छूट है किन्तु वित्तीय

साधनों के अभाव, रुचियों में कमी, अनुभवहीनता आदि के कारण पंचायतें केन्द्र और राज्य सरकारों पर ही निर्भर है समाज कल्याण कार्यक्रमों के लिए।

नगरीय स्थानीय संस्थाओं में नगर निगम, म्युनिसिपल बोर्ड, नोटिफायड एरिया, नगर समितियाँ आदि आती हैं। सभी नगर निकायों को स्वैच्छिक रूप से कल्याण कार्य सौंपे गए हैं। ये स्थानीय संस्थाएँ बहुत अच्छा कार्य कर सकती हैं और करती हैं। दिल्ली नगर निगम विधेयक 1957 से यह अपेक्षा की गयी है कि नाली बनाना तथा उनका रखरखाव, सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण, सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के लिए जल की व्यवस्था करना, परिवहन सुविधाएँ उपलब्ध कराना, टीकाकरण और खतरनाक बीमारियों पर नियंत्रण के उपाय करना, मनोरंजन के लिए क्रीड़ागृहों की स्थापना आदि का कार्य नगर निगम करेगा। सभी नगर निगमों को इस प्रकार की अनेक कल्याण कार्यक्रमों को संचालित करने की पूरी छूट दी गयी है किन्तु नगर निगमों की उदासीनता से वित्तीय कमी आदि के कारण समाज कल्याण के कार्यों की उपेक्षा की जाती है। जिस नगर निगम में अच्छे लोग हैं वहाँ अच्छा कार्य होता है और हो रहा है लेकिन अधिकांश नगर निगम के दायित्वों को पूर्ण नहीं कर पाती।

पश्चिमी विकसित देशों में समाज कल्याण सेवाएँ स्थानीय संस्थाओं और अधिकारियों द्वारा किए जाते हैं। ब्रिटिश शासन में प्रत्येक अधिकारी को निजी समाज सेवाओं की जिम्मेदारी दी जाती है। अमेरिका में स्थानीय स्तर पर कल्याण सेवाएँ स्वैच्छिक संगठनों द्वारा किया जाता है। कैनाडा में कल्याण सेवाओं में होने वाले व्ययों को सरकार और स्थानीय संस्थाएँ आधा–आधा के हिसाब से वोट लेती हैं। स्वेडन में समाज कल्याण सेवाएँ और जनस्वास्थ्य का काम नगर निगमों पर ही रहता है। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में समाज कल्याण कार्यों के लिए स्थानीय संस्थाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। ष्जैसा की इसकी प्रकृति है इनमें से कई (कल्याण) कार्यक्रम केवल स्थानीय तथा सामुदायिक स्तर पर कार्यशील सरकारी और गैर सरकारी एजेंसियों के सहयोग से काम करने के उचित वातावरण के माध्यम से प्रभावी ढंग से लागू किए जा सकते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि इन एजेसियों को इतनी स्वतंत्रता दी जाय कि वे प्रत्येक समुदाय के अन्तर्गत दिन प्रतिदिन उठने वाली समस्याओं के समाधान के लिए अपने ढंग से परिवर्तन करने में सक्षम हों। एक सीमा से अधिक नियोजन ओर निर्देशन क्रियान्वयन में अवरोध उपस्थित करता है। समाज कल्याण योजनाओं की सफलता की कुंजी प्रत्येक समुदाय द्वारा सामुदायिक कल्याण की सम्यक दृष्टि अपनाने में है। वे अपने सदस्यों के हितों का पूरा ध्यान रखे, विशेषकर उनका जिन्हें सहायता की अधिक अपेक्षा है इसका अर्थ यह है कि स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं और स्वैच्छिक संगठनों को मजबूती प्रदान करने के लिए हर सम्भव प्रयास किए जाय। ष्रेणुका राय के अध्ययन दल ने भी यह स्वीकार किया है कि, ष्नगर निगमों और नगर समितियों को शहरी क्षेत्रों में मुख्य कल्याण एजेंसियों के रूप में स्वीकार किया जाय तथा समाज कल्याण और पिछड़ी जातियों के लोगों के कल्याण कार्यक्रमों के लिए उन्हें नियमित रूप से केन्द्रीय और प्रान्तीय सहायता प्राप्त हो।

POSDCORB

लूथर गुलिक ने कल्याण प्रशासन के कार्यों का वर्गीकरण के लिए एक मायावी सूत्र का प्रयोग किया है उसके अनुसार, षनिसंक निसप्रव POSDCDRB कहा जाता है। नि का

अर्थ है नियोजन, सं का अर्थ है संगठन, क का कार्मिकों की नियुक्ति नि का निर्देशन, स का समन्वयन, प्र का प्रतिवेदन और व का वजट निर्माण। इसके अतिरिक्त भी कई विद्वानों ने इसका वर्गीकरण किया है।

1. नियोजन (Planing) –नियोजन भविष्य को संरचना और संचालन की प्रक्रिया पर दृ ष्टि रखता है। संस्था के कार्यो, उद्देश्यों तथा नीतियों का निर्धारण एवं स्पष्टीकरण भी इसी के अन्तर्गत आता है। प्रत्येक संस्था को कुछ तथाकथित कार्य करने होते हैं तथा उनके कुछ दीर्घकालिक उद्देश्य होते हैं जिनकी पूर्ति के लिए कार्यशैली और नीतियों का निर्धारण करना होता है। जनसंख्या की परिवर्तनशील आवश्यकताओं की पूर्ति तथा व्यावसायिक अनुभव का उपयोग करते हुए सेवाओं को गत्यात्मकता का स्वरूप प्रदान किया जाता है। नियोजन संस्था की सेवाओं और कार्यक्रमों पर आधारित होता है।

2. संगठन (Organization) – संस्था की कोई न कोई प्रशासनिक संरचना होती है जिसे संगठन कहा जाता है। समाज कल्याण प्रशासन या स्वयंसेवी संस्था सभी का एक प्रशासनिक तंत्र होता है। इस प्रशासनिक तंत्र के कार्य व्यवहार और क्षेत्र का निर्धारण पूर्व में ही कर लिया जाता है। किस व्यक्ति का क्या दायित्व है, किसे कौन सा काम करना है कौन किसके अधीन है आदि सारी बातें संगठन के क्षेत्र में आती हैं। संगठन जितना ही सृदृढ़ होगा कार्य उतना ही उत्तम होगा। संगठन की कहीं कोई कड़ी गड़बड़ है तो उसका प्रभाव संगठन के कार्यों पर पड़ता है।

3. कर्मचारी नियुक्ति (Staffing) –प्रत्येक संस्था में प्रशासनिक व्यवस्था की आवश्यकता होती है। प्रशासन तंत्र कर्मचारियों के वर्ग संयोजन, आकार और क्षमता किसी संगठन के महत्वपूर्ण तत्व है। कर्मचारियों की नियुक्ति प्रोन्नति, रोजगार,कार्यकाल, वेतन, अवकाश तथा कार्य की दशा आदि कर्मचारी नियुक्ति के अन्तर्गत आते हैं। कार्मिकों का स्तर निर्धारण, पदोन्नति तथा प्रतिपूर्ति की कसौटियों निर्धारित होती है। कर्मचारियों के कार्यों व्यवहारों और क्षमताओं का मूल्यांकन भी इसी के अन्तर्गत आता है। सेवाकालीन प्रशिक्षण, सेवानिवृत्ति कर्मचारी का पदच्युतिकरण, निरीक्षण तथा अनुशासनिक कार्य आदि भी नियुक्ति सम्बंधी कार्यों के अन्तर्गत ही आता है। समाज कार्य मुख्यतः कर्मचारी प्रशासन और कर्मचारी के लिए निर्धारित होने वाले नियमों के निर्धारण में सहयोग करता है।

4. निर्देशन (Direction) –किसी भी संस्था के कर्मचारियों और अधिकारियों को कार्य करने के लिए निर्देश की आवश्यकता होती है। कार्य कैसा हो, किस प्रकार हो, और उसे कौन करेगा आदि के लिए निर्देश कार्यकारी द्वारा दिया जाता है। कार्यकारी वह होता है जिसमें अन्तिम निर्णय लेने तथा प्रशासकीय प्रक्रिया के निरीक्षण करने का अधिकार हो और उत्तरदायित्व प्राप्त हो । आज सबकुछ व्यावसायिक हो चुका है इसलिए कर्मचारी के साथ व्यावसायिक चिंतन की आवश्यकता होती है इसी क्रम में विश्वास प्रदर्शन, संचालन में उन्नति, निष्पक्ष मूल्यांकन तथा व्यवहार आदि आता है। किसी समाज कल्याण संस्था में प्रमुख रूप से प्रार्थियों का स्वागत, प्रार्थनापत्र पूर्ण करने में सहायता, सहायता जांच को आगे बढ़ाना, सामाजिक अनुसंधान योग्यता निर्धारण आदि महत्वपूर्ण कार्य होते हैं जिसके लिये निर्देश कार्यकारी द्वारा प्राप्त होता है। इस नियमित कार्यविधि को ष्उपयोगी करणष का भी नाम दिया जाता है।

5. <u>समन्वय (Coordination)</u> – अनेक ऐसे कार्य हैं सामाजिक संस्थाओं और सार्वजनिक संस्थाओं में जहाँ समन्वय न होने के कारण कई कठिनाईयाँ आती हैं। भारतीय विकास योजनाओं पुलिस प्रशासन आदि में हमेशा समन्वय की कमी का रोना रोया जाता है। यह बिल्कुल सही स्थिति है कि एक तरह का कार्य करने वाले अनेक विभागों में तालमेल नहीं है जिसके कारण उचित कार्य नहीं हो पाता । समन्वयन के लिए सभी विभागों के कर्मचारियों और अधिकारियों के कार्य का स्पष्ट निर्धारण एवं अधिकार की दिशाओं का सही निर्धारण कर दिया जाय। ऐसी स्थिति मेंकार्यकारी को अपने स्टाफ प्रत्येक सदस्य को अपनी उद्यमशीलता और दक्षता के प्रयोग का अवसर देना चाहिए। संस्था का प्रत्येक कार्य महत्वपूर्ण है प्रत्येक कर्मचारी इस महत्वपूर्ण कार्य को करता है इसलिए उसे यह आभास दिलाने की आवश्यकता होती है कि जो कार्य यह कर रहा है यह संस्था के लिए महत्वपूर्ण है। कार्यकारी को बोर्ड द्वारा निर्धारित सामाजिक नीति की अच्छी जानकारी होती है सामुदायिक सम्बंधों के बीच समन्वय स्थापित करना आवश्यक समझा जाता है।

6. प्रतिवेदन (Reporting) – किसी भी संस्था के लिए सम्पादित कार्यों, भविष्य में होने वाले कार्यों एवं कमियों की जानकारी नियंत्रकों सदस्यों, विधायिका संस्थाओं और समाज के लोगों को देने की आवश्यकता होती है। इस कार्य के लिए डाक्यूमेन्टेशन (Documentation) लेखा के नियमों, सांख्यिकी एवं शोध की आवश्यकता होती है। जिससे कि प्रतिवेदन निर्धारित समय पर दिया जा सके। प्रतिवेदन में वैधानिक प्राविधान, सांख्यिकी तथा औपचारिक लेख के अतिरिक्त समाचार पत्रों, रेडियो, टेलीविजन द्वारा प्रसारित समाचारों एवं जनप्रतिनिधियों द्वारा दिए गये बयानों को सम्मिलित किया जाता है। इससे संस्था के कार्यों के महत्व को प्रभावशाली ढंग से लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। उचित तरीके से लिखे और सम्पादित लेखों और पठनीय प्रतिवेदन से सार्वजनिक समन्वय बनाने में सुविधा मिलती है। यह प्रतिवेदन से सार्वजनिक सम्बन्ध बनाने में सुविधा मिलती है। यह प्रतिवेदन सामाजिक सेवाओं को पारस्परिक सहायता तथा अनुपूरक के रूप में दृ ष्टिगोचर होना चाहिए, जिससे कि संस्था को सहयोग करने वाले लोगों का सहयोग अधिक से अधिक प्राप्त हो सके।

7. <u>वजट (Budget)</u> –वजट ने संस्था के संशाधनों की आपूर्ति वितरण तथा नियंत्रण का कार्य आदि महत्वपूर्ण होते हैं। सार्वजनिक संस्थाओं में वजट के निर्धारण के लिए केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय संस्थाओं से वार्ता करनी होती है। स्वयंसेवी संस्थाओं में धन संचय या सामुदायिक कोष से धन प्राप्त होता है। इन सभी प्रकार से प्राप्त धन का सही हिसाब रखना आवश्यक होता है। जिससे कि यह पता चल सके कि प्राप्त धन का बुद्धिमत्तापूर्ण एवं संस्था की नीतियों के एवं नियमोंके अनुसार ही किया ग ही किया गया है। उपलब्ध निधियों का निष्पादन भी इस प्रकार होना चाहिए ताकि शाखा अपना कार्य सुगमता से कर सके।

इकाई–5

सामाजिक अधिनियम (Social Legislation) – जी.सी. हालन ने सामाजिक विधान को परिभाषित करते हुए कहा है, ''सामाजिक विधान सामान्य अर्थो में राज्य द्वारा किए गए उन प्राविधानों को कहते हैं जो मानवता तथा समानता के आधार पर व्यापक स्तर पर समाज के उत्थान के लिए बनाए तथा लागू किए जाते हैं। समाज कल्याण के लिए सामाजिक सुधार और सामाजिक अधिनियम दोनो का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।'' समाज सुधार सम्बन्धी अवधारणाएँ समाज कल्याण और सामाजिक पुननिर्माण के लक्ष्य को बतलाती है वही सामाजिक नियम सामाजिक स्वीकृति और समाज के सदस्यों / नागरिकों द्वारा उनके पालन के लिए जोर डालते हैं। विलियम बैन्डेल होम्स का मानना है कि, ''आज का विधान बीते हुए कल की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए है।'' समाज को ऐसे नियमों की आवश्यकता रही है जो समाज को एकसूत्र में बांधे रहे। पहले इन नियमों को प्रथा कहा जाता था। प्रथाओं से समाज को आगे बढ़ने में सहायता प्राप्त होती थी। प्रथाओं का उल्लंघन सामाजिक बहिष्कार का कारण बनता था। राज्य की उत्पत्ति के बाद प्रथाओं को कानून का रूप ले लिया। कानून या अधिनियम प्रथाओं का ही पर्याय है, जिसका निर्माण राज्य की व्यवस्था को क्रमबद्ध रूप से चलने के लिए होता है।

प्रथा और अधिनियमों में परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तन किए जाते हैं परिवर्तन के अभाव में विघटन की स्थिति पैदा होती है, जिससे कुरीतियाँ बढ़ती है। राज्य में कानून के साथ–साथ प्रथाएँ भी चलती रहती है। अनेक प्रथाएँ हैं जो सदियों से मानव को निर्देशित करती रही हैं। वे आज भी विद्यमान है जो सामाजिक विघटन का कारण वन जाती हैं। कुरीतियों और कुप्रथाएँ भारतीय समाज को हमेशा से पीछे ढकेलती रही है जिसके कारण अनेक समाज सुधार आन्दोलनों का जन्म हुआ। सुधार आन्दोलनों से प्रभावित होकर राज्य सामाजिक अधिनियम लाता है जो बाद में सामाजिक विधान या कानून का रूप ले लेता है।

एक परम्परागत समाज होने के कारण भारत में अन्ध विश्वास, रूढ़ियाँ और संकीर्णता का बोलबाला स्वतंत्रतापूर्ण के पूर्व पूरी तरह हावी रहा है और आज भी है। महिलाओं की निम्न स्थिति, संयुक्त परिवार का विघटन, बाल विवाह, बहु विवाह, दहेज प्रथा, क्रय विवाह, जाति प्रथा, अस्पृश्यता किशोर अपराध, साम्प्रदायिकता, वेश्यावृत्ति आदि सामाजिक समस्याओं के कारण भारत के विकास में बाधा उपस्थित होता है इन सभी समस्याओं के सम्बंध में सामाजिक विधान बने हुये किन्तु ये परम्पराएँ चलती आ रही हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इन समस्याओं के समाधान के लिए विधान का निर्माण हुआ। समाज सुधार सम्बंधी विधान के नियम हैं जिनका पालन करने के लिए समाज का व्यक्ति और संस्थाएँ बाध्य करती हैं। समाज कल्याण और समाज सुधार के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सामाजिक विधान की आवश्यकता होती है।

सामाजिक विधान क्यों (Why Social Legislation) – आदिम समाज में मानव पर प्रथाओं और रीति–रिवाजों का नियंत्रण था। समाज में जटिलता बढ़ जाने के कारण प्रथाओं और रीति–रिवाजों से सामाजिक नियंत्रण सम्भव नहीं रहा इसलिए सामाजिक विधान की आवश्यकता पड़ती है। आज राज्यों का यह दायित्व है कि सामाजिक विधान के माध्यम से कुप्रथाओं पर नियंत्रण रखे। सामाजिक विधान के निर्माण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पड़ती है–

1. औद्योगीकरण और नगरीकरण के कारण वर्तमान में अर्थ व्यवस्था अनियंत्रित और अन्यायपूर्ण हो गयी है जिसके कारण समाज में गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी और भुखमरी की समस्याएँ बढ़ी हैं। अतः बेरोजगारी और गरीबी के संकट को दूर करने के लिए सामाजिक विधान की आवश्यकता है।

2. भारतीय समाज आरम्भ से ही शक्तिशाली और शक्तिहीन, अमीर और गरीब के बीच असमानता का शिकार रहा है। शक्तिहीन और गरीब लोगों के हितों की रक्षा के लिए सामाजिक विधान अपरिहार्य है।

3. प्रजातंत्र में सभी को समान अवसर और सुविधाएँ प्रदान करना आवश्यक है ताकि सभी नागरिक सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सके। अपने नागरिकोंको अवसर की समानता प्रदान करेन के लिए राज्य का कर्तव्य है कि वह सामजिक विधान बनाकर असमानता को नियंत्रित करे।

4. विकसित समाज में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। औद्योगीकरण और नगरीकरण ने जहाँ एक वर्ग को सम्मानपूर्वक जीवन निर्वाह करने का अवसर दिया है वहीं दूसरा वर्ग पीड़ित और समस्याओं से ग्रस्त है। अपराधीकरण और असुरक्षा समाज में बढ़ा है। इसीलिए सामाजिक बीमा सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक विधान के द्वारा समाज के प्रत्येक नागरिक का हित साधन आवश्यक हो गया है।

सामाजिक अधिनियम नागरिकों के हित के लिए आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य है इसीलिए सामाजिक सुरक्षा से सम्बंधित अनेक कानूनों का निर्माण किया है जिनमें प्रमुख हैं—

1. सती प्रथा निषेध अधिनियम 1829

2 हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856

3. विशेष विवाह अधिनियम 1872, 1925, 1954

4. हिन्दू अल्प वयस्कता एवं अभिभावकता अधिनियम 1926

5. बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1930, 1949

6. हिन्दू कानून का संहिता करण 1950

7. अस्पृश्यता अपराध अधिनियम 1955

8. हिन्दू विवाह व तलाक अधिनियम 1955

9. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956

10. स्त्रियों एवं बच्चों में अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम 1956

उपरोक्त सामाजिक अधिनियम समाज की समस्याओं का समाधान करते हैं तथा समाज कल्याण के क्षेत्र में योगदान करते हैं। प्राचीन काल में प्रथाएँ सामाजिक अधिनियम का कार्य करती रही हैं और सामाजिक अधिनियम वर्तमान समय मेंसामाजिक समस्याओं के समाधान में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं समाज को विघटित होने से बचाने के लिए भी इन अधिनियमों को प्रयोग होता है, औद्योगीकरण, नगरीकरण और सामाजिक गतिशीलता के कारण समाज में परिवर्तन हो रहे हैं। परिवर्तनों के कारण स्वाभाविक रूप से नयी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं। रूढ़िवादी, परम्परावादी और रीति रिवाजों से बंधा हुआ नागरिक वर्तमान परिस्थितियों से सामंजस्य नहीं स्थापित कर पा रहा है, जिसके कारण असंतुलन की स्थिति पैदा होती है। इसी असंतुलन को दूर करने के लिए सामाजिक अधिनियमों की आवश्यकता है जिससे नागरिकों को नियंत्रित किया जा सके।

महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन के साथ ही निर्बल और पिछड़े वर्गों की परिस्थितियों में बहुत बदलाव देखने को मिल रहा है इसीलिए हम इस बात को दावे के साथ कह सकते हैं कि समाज कल्याण और सामाजिक परिवर्तन के लिएसामाजिक अधिनियमों की महत्वपूर्ण भूमिका है। सामाजिक विधान और सामाजिक परिवर्तन रू वर्तमान लोक कल्याणकारी शासन व्यवस्था के पूर्व प्रथाओं, परम्पराओं और रीति–रिवाजों के आधार पर लोग काम करते थे जिसमें स्वयं अनेक विसंगतियों थीं। राजाओं महाराजाओं की आज्ञा ही कानून था अपनी तर्क बुद्धि का उपयोग व्यक्ति नहीं कर पाता था। कभी अंग्रेजों का कभी मुगल शासकों का कभी देशी राजाओं के दमनचक्र के आगे लोग अपना सिर झुकाए हुए थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सामाजिक अधिनियम का निर्माण हुआ। आज से तीन शताब्दियों पूर्व महिलाओं की स्थिति यह थी कि वे सारा दमनचक्र सहन कर लेती थीं। पति, पंचायतों और पंडितों द्वारा ही नहीं गांवों के शोहदों द्वारा भी यौन शोषण होता था पर स्त्रियाँ आवाज नहीं निकालती थीं। आज नित्य के अखबारों में यौन शोषण, बलात्कार आदि के समाचार देखने में मिल जाते हैं। यह पहले भी होता था किन्तु स्त्रियाँ अपनी जबान नहीं खोलती थीं। माता–पिता भी इन घटनाओं को दबाने का काम करते थे। सामाजिक अधिनियमों ने ही महिलाओं को वह ताकत दिया है कि वे शोषण के विरुद्ध बोलें। शिक्षा के क्षेत्र में भी सामाजिक अधिनियमों ने महिलाओं को आगे बढ़ाया है। अब वे डाक्टर, इंजीनियर, शिक्षक कुछ भी बनने कोतैयार हैं। संरक्षकों ने भी महिलाओं में यह परिवर्तन लाने के लिए योगदान प्रदान करना आरम्भ किया है। अब महिलाओं की संख्या कालेजों, इंजीनियरिंग कालेजों और चिकित्सा शिक्षा के क्षेत्र में भी वृद्धि हो रही है।

ठीक इसी प्रकार पिछड़ा वर्ग मुख्य रूप से बड़े लोगों की सेवा में था। वह जमींदारों के लिए खेती करता था। उसके पास अपना खेत नहीं था। बंटाई की खेती करता था। नौकरी पेशे में बहुत कम लोग जा पाते थे क्योंकि संशाधनों का अभाव था। आरक्षण ने उनमें जान भर दिया। वे जमीदारों, सवर्णों को पीछे ढकेल कर आगे बढ़ रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यदि किसी वर्ग का विकास हुआ है तो वह पिछड़ा या अति पिछड़ा वर्ग है। यह परिवर्तन सामाजिक अधिनियम की ही देन है कि पिछड़ा वर्ग प्रत्येक क्षेत्र में आगे है। राजनीति, व्यापार, सेवा, कृषि उत्पादन आदि का जो कार्य पिछड़े वर्ग के लोग कर रहे हैं वह सराहनीय है। वही सवर्ण और सामान्य वर्ग के लोग अपने प्रथाओं को ढोते हुए पीछे की ओर जा रहे हैं।

अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए बने विशेष सामाजिक अधिनियमों और कल्याण कार्यक्रमों के फलस्वरूप शिक्षा और नौकरी के क्षेत्र में यह वर्ग आगे बढा है। किन्तु आगे वही बढ़ा है जो आगे था । चार–पाँच सौ की आबादी वाले गांवों में एक या दो लोग ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर आगे बढ़े हैं। अभी इस वर्ग की महिलाओं में विछड़ापन देखने को मिल जाएगा। उनके मन से संकोच की भावना की समाप्ति नही हो पा रही है। वे आज भी प्रथाओं और कुरीतियों में अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं। शहरों में रहने वाले इस वर्ग के लोग भी बहुत कम अवसर प्राप्त कर रहे हैं। इनके लिए अनेक सामाजिक अधिनियम हैं किन्तु इनमें परिवर्तन कम हो रहा है। आज की शिक्षण संस्थाओं, सरकारी सेवाओं और चिकित्सा शिक्षा आदि क्षेत्रों में इनके लिए आरक्षित सीटें खाली है। इस वर्ग के कुछ लोग जो आगे आए हैं वे नही चाहते कि इस वर्ग के लोग भी आगे आवें।

परिवर्तन होते रहते हैं समाज में अनेक परिवर्तन हुए हैं। समाज कल्याण, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक अधिनियमों ने सामाजिक परिवर्तन लाने का कामकिया है। फिर भी अभी बहुत कुछ करना बाकी है। ग्रामीण महिलाओं में आज भी कुपोषण, बीमारी और अज्ञानता है जिसके कारण सम्यक् परिवर्तन नही हो पा रहा है। सदियों से जमी हुई रूढ़ियाँ और प्रथाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी हैं। आज भी ओझा सोरवाओं का आधिपत्य बना है जिसके कारण महिलाएँ प्रसव के लिए अस्पतालों में नहीं जाती। प्रसवपूर्व या बाद में दवाइयाँ नही लेती फलतः कुपोषण और अधिक बाल मृत्यु दर और मातृ मृत्युदर है। परिवार के समस्त साधनों के उपलब्ध होने के बाद भी परिवार कल्याण के क्षेत्र में लोग पिछड़े हुए हैं। मजदूरों के पांच छः बच्चे हैं जिनका पोषक छोटी मजदूरी में नही हो पाता। इस क्षेत्र में भी सामाजिक विधा हैं सामाजिक विधानों की अपनी सीमाएँ हैं जिसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में जन चेतना और जागरूकता की आवश्यकता है जो जगा है वह आगे बढ़ा है जो सोचा है वह सो रहा है उसके लिए सामाजिक अधिनियम का कोई अर्थ नहीं है। सामाजिक अधिनियम साधन है और इसके लिए आवश्यक है जन चेतना।

जनहित याचिका (Public Interest Litigations)

निर्धन, अल्पसुविधाभोगी शोषित और उत्पीड़न का सहारा लेकर क्षतिपूर्ति कराने में असमर्थ रहते हैं। उन्हें अपने प्रति होने वाले गैर कानूनी व्यवहारों की जानकारी नहीं होती जिससे कि वे क्षतिपूर्ति आदि के सम्बंधों में कोई कार्य कर सके। यदि जानकारी किसी तरह से हो भी जाय तो वे महंगे कानून व्यवस्था के कारण अपने अधिकार का उपयोग नहीं कर सकते। उनके पास पर्याप्त धन की व्यवस्था नहीं है कि वे किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकें।

अब धीरे–धीरे आम जनता में साक्षरता बढ़ने और मौलिक अधिकारों और कानूनों की जानकारी होने से सामाजिक कार्यवाही और सामाजिक सुधार के कार्यों मे महत्वपूर्ण परिवर्तन से जनहित याचिका की ओर ध्यान जाने लगा।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वैध स्थिति की व्याख्या के कारण पी.आई.एल. को क्षेत्र में विशेष महत्व प्राप्त हुआ है। वैध स्थिति की व्याख्या के अनुसार यदि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के विपरीत कोई अवैधानिक कार्य हो रहा है और वह गरीब और असहाय स्थिति के कारण न्याय पाने के लिए खर्च नहीं कर पाता है ऐसे समय कोई भी सामाजिक

कार्यकर्ता जिसमें सामाजिक भावना हो, या कोई सामाजिक क्रिया समूह उसकी या उन व्यक्तियों के समूह की ओर से याचिका दाखिल कर सकता है। यह आवश्यक नही है कि पीड़ित व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह ही न्यायालय का दरवाजा खटखटाए।

जनहित याचिका (PIL)का अर्थ होता है जनहित या सामान्य हित लागू कराने के लिए किसी न्यायालय में दायर की गयी कानूनी कार्यवाही जनहित या सामान्य हित के धन सम्बंधी या ऐसे हित जिससे कानूनी हक या जिम्मेदारियों पर विपरीत प्रभाव पड़ता हो जनहित याचिका कहा जाता है। जो व्यक्ति या व्यक्ति समूह अकेले कानून की शरण में जाने में सक्षम नही हो उसे न्याय दिलवाने का कार्य पी.आई.एल. द्वारा होता है।

संवैधानिक प्राविधान

संविधान के अनुच्छेद 32 और 226 के द्वारा प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार प्राप्त है कि वह जहाँ कहीं मूल अधिकारों का उल्लंघन देखें, वह उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालयों में न्याय पाने के लिए गुहार लगा सके। अनुच्छेद 32 (1) के अनुसार मूल अधिकारों को लागू करने के लिए उपयुक्त प्रक्रिया अपनाकर सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर की जा सकती है। अनुच्छेद 32 (2) के अनुसार मूल अधिकारों को लागू करने के लिए उपयुक्त प्रक्रिया अपनाकर सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर की जा सकती है। अनुच्छेद 32 (2) के अनुसार संविधान के भाग III में प्रदत्त किसी भी अधिकार को लागू कराने के लिए उचित निर्देश देने, आदेश देने या रिट जारी करने का अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को है जिसमें बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpos), परमाधिदेश (Monodamoes) और उत्प्रेषण लेख (Certiorasi) जैसे रिट सम्मिलित हैं।

अनुच्छेद 226 के अनुसार अनुच्छेद 32 मे दी गयी किसी भी व्यवस्था के होते हुए भी प्रत्येक उच्च न्यायालय को अपने क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत भाग III में दिए गए किसी मूल अधिकार को लागू करने के लिए किसी व्यक्ति या प्राधिकरण को उपयुक्त निर्देश देने, आदेश देने या रिट जारी करने जिसमें वन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) परमाधिदेश (Monodamos) निषेध, अधिकार प्रेच्छा (Quo Warranto) और उत्प्रेक्षा लेख (Certiorari) जैसे सम्मिलित हैं का अधिकार रखता है।

संविधान के अनुच्छेद 14, 21 और 32 के अर्थ और प्रसार क्षेत्र में कमजोर वर्गों के हित में व्यापक व्याख्याएँ की गयी हैं। जीवन जीने का अधिकार की व्याख्या का अर्थ जीवन यापन के अधिकार से भी है। इसी प्रकार अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत गारंटीशुदा समानता के अधिकार की व्याख्या के अन्तर्गत निर्णय लेने में कार्यवाही और प्रशासनिक अधिकारियों की स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध अधिकार प्रदान किया गया है।

वैधानिक स्थिति

जब कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूहों के अधिकारों का उल्लंघन होता है और वह गरीबी या अज्ञानता के कारण न्यायालय तक पहुंच नहीं पाता है तो कोई भी ऐसा व्यक्ति जिसमें सामाजिक हित की भावना है या कोई संगठन भलाई की भावना से न्यायिक राहत पाने के लिए अदालत जा सकता है।

SP Guptavs Indian Union (AIR 1982 SC 149) के मामले में सात जजों के संविधान बेंच ने बहुमत से यह निर्णय दिया कि यदि जनता का कोई व्यक्ति सही मन से और जनता के साथ दुर्व्यवहार या चोट पहुँचाने पर उसके प्रति सुधारात्मक कदम उठाने और क्षतिपूर्ति कराने में दिलचस्पी रखता है और मात्र व्यस्त संस्था या हस्तक्षेप की नीयत से काम नहीं कर रहा है तो वह मामले को अदालत में ले जा सकता है। अगर किसी एक व्यक्ति या व्यक्तियों का एक वर्ग को कानूनी दुर्व्यवहार के कारण मुसीबत का सामना करना पड़ रहा हो और वे गरीब और बेसहारा या सामाजिक पिछड़ेपन के कारण स्वयं न्यायालय की शरण में नहीं जा पाते हैं और इसलिए कोई व्यक्ति या कोई सामाजिक संगठन न्यायालय में याचिका दायर करता है तो अदालत नियमबद्ध प्रक्रिया अपनाने की मांग नहीं करेगा।

सर्वोच्च न्यायालय ने यह व्यवस्था दिया है कि जनता का कोई व्यक्ति यदि पर्याप्त रुचि रखता है तो वह अन्य व्यक्तियों की सामान्य कठिनाईयों, मुसीबतों को दूर करने के लिए और उसे संवैधानिक या कानूनी प्राधिकार दिलवाने के लिए अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है।

पी.आई.एल. दाखिल करने के लिए अयोग्य व्यक्ति –

1. जिस व्यक्ति की सामाजिक हितों में रुचि न हो

2. जो व्यक्ति अपने लाभ या अपने हित के लिए कार्य करता है

3. राजनैतिक ग्रस्तता वाला व्यक्ति

4. बुरा इरादा रखने वाला व्यक्ति

5. एक तीसरा पक्ष जो अभियोग पक्ष के लिए अन्जान हो और जिसमें अपराधी की सजा सुनाई गयी हो।

पी.आई.एल. में उठाये जाने वाले मामले –

1. मूल सुविधाएँ जैसे कि सड़कें, पानी, दवाईयाँ, बिजली, प्राथमिक पाठशालाएँ, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, बस सेवाएँ आदि

2. शरणार्थियों का पुनर्वास

3. बन्धुआ और बाल मजदूरी की पहचान और उनका पुनर्वास

4. गिरफ्तार लोगों की गैर कानूनी नजरबन्दी

5. पुलिस हिरासत में लोगों के साथ दुर्व्यवहार/उत्पीड़न

6. हिरासत में मृत्यु

7. कैदियों के अधिकारों की रक्षा

8. जेल सुधार

9. मुकदमों की तेजी से सुनवाई

10. कालेजों में रैगिंग

11. पुलिस द्वारा नृशंसता का व्यवहार

12. अनुसूचित जाति के विरुद्ध नृशंसताव्यवहार

13. सरकारी कल्याण गृहों में रहने वालों के प्रति लापरवाही।

14. हिरासत में बच्चे 15 बच्चों को गोद लेना

16. सरकारी कर्मचारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामले

17. कानून और आदेशों का पालन

18. न्यूनतम वेतन का भुगतान

19. गरीबों के लिए कानूनी सहायता

20. भुखमरी के कारण मृत्यु

21. टेलीविजन पर अश्लील कार्यक्रम

22. मद्य निषेध

23. पर्यावरण प्रदूषण

24. अप्राधिकृत रूप से घर से निकालना

25. पटरी और गन्दी बस्तियों में रहने वालों की रक्षा

26. दहेज के कारण मृत्यु

27. कल्याणकारी कानूनों का पालन

28. गैर कानूनी प्रथाओं का सुधार, जैसे कि सती, बाल विवाह, देवदासी प्रणाली आदि

29. कमजोर वर्गों के मूल अधिकारों का उल्लंघन।

<u>पी.आई.एल. दाखिल करने की प्रक्रिया</u> :—

जनहित दायर करने वाले व्यक्ति के लिए संविधान के अनुच्छेद 32 के अनुसार न्यायालय में दाखिल करने वाली प्रक्रियाओं का पालन करना आवश्यक नही हैं। इसमें प्रक्रियाओं और औपचारिकताओं के पालन भी आवश्यक नहीं होती। प्रक्रिया न्याय की प्रथम

कड़ी है। किन्तु केवल औपचारिकताओं और प्रक्रियाओं को पूर्ण न करने के कारण किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को न्याय का हनन सम्भव नहीं है। इसलिए जनहित याचिका में न्यायालय बिना किसी संकोच के बिना किसी संदेह के अपने अधिकारों का प्रयोग करते समय तकनीकी प्रक्रियाओं को नजरअंदाज करसकता है और सामाजिक भावना रखने वाले व्यक्ति के पत्र को रिट याचिका समझकर उस पर कार्यवाही कर सकती हैं।

पी.आई.एल. दाखिल करने का तरीका :–

(1) सम्बंधित न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के नाम याचिका पत्र भेजना जिसमें उससे सम्बंधित तथ्य और दस्तावेज भी हों। यह पत्र रजिस्टर्ड डाक द्वारा ही भेजा जा सकता है।

(2) न्यायालय की निःशुल्क कानूनी सेवा समिति के माध्यम से सीधे अदालत में PIL दाखिल करना।

(3) किसी PIL एडवोकेट की मदद लेकर सीधे–सीधे मामला दायर करना।

(4) NGO या PIL कर्मी के माध्यम से मामला दाखिल करना।

ध्यान रखने योग्य मुख्य बातें :–

1. प्रभावित व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ तत्संबंधी मामले पर विस्तारपूर्वक विचार करना।

2. यह पता लगाना कि मामला मूल अधिकारों से संबंधित है या नहीं। PIL में यह बतलाना आवश्यक है कि किस मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है।

3. लोगों की सहायता करना कि मूल अधिकारों को पाने या उनके अधिकारों के उल्लंघन होने को रोकने के लिए अदालत में कार्यवाही करना अनिवार्य है।

4. सभी तथ्यों, विवरणों, तारीखों आदि का उल्लेख करके याचिका तैयार करना।

5. याचिकामें उल्लेख करें कि लोग किस तरह की राहत चाहते हैं।

6. यदि सम्भव हो तो सभी प्रभावित लोगों के हस्ताक्षर अवश्य करा लें।

7. ममले से सम्बंधित सभी दस्तावेज समाचार पत्रों की कतरने, फोटो ग्राफ, जांच रिपोर्ट, प्रमाण पत्र और हलफनामें एकत्रित करें और उन्हें मुख्य याचिका के साथ नत्थी करें।

8. याचिका दाखिल करने से पहले अगर सम्भव हो तो किसी सामाजिक सजग वकील या स्थानीय कानूनी सलाहकार समिति के सदस्यों से परामर्श कर ले।

9. याचिका को सम्बंधित उच्च न्यायालय की उच्च न्यायालय कानूनी सेवा 14 समिति के अध्यक्ष या सर्वोच्च न्यायालय कानूनी सेवा समिति के अध्यक्ष नयी दिल्ली 110001 का रजिस्ट्री द्वारा भेज दे।

10. अगर याचिका कमजोर वर्ग के लोगों की तरफ से दाखिल किया गया है तो अदालत याचिकादाता को अदालत के शुल्क का भुगतान करने से छूट दे सकती है।

वकील की नियुक्ति :–

यदि याचिकादाता स्वयं वकील नहीं है तो वह चाहे तो अदालत के समक्ष स्वयं अपनी बात उपस्थित होकर कर सकता है। याचिकाकर्ता को वकील की व्यवस्था करने का अधिकार अदालत को है। अदालत चाहे तो याचिकादाता की सहायता के लिए एक वकील की नियुक्ति कर सकती है या वह इस मामले को कानूनी सेवा समिति को उपयुक्त कानूनी सहायता प्रदान करने के लिए भेज सकती है।

साक्षी – पी.आई.एल. याचिका में दिए गए तथ्यों और दावों के समर्थन में साक्ष्य निम्नलिखित माध्यमों से एकत्र किए जा सकते हैं–

1. याचिका में व्यक्त तथ्यों और सच्चाइयों के सम्बन्ध में सम्बंधित व्यक्तियों से हलफनामे लेना।

2. समाचार पत्रों की कतरने।

3. मामले में किए गए सर्वेक्षण या अनुसंधान की रिपोर्ट।

4. मामले में किसी स्वयंसेवी संस्था या किसी सरकारी संस्था द्वारा दी गयी कोई जांच रिपोर्ट।

5. सरकार के सम्बन्धित विभाग द्वारा जारी किए गए दस्तावेज।

पी.आई.एलकी सफलता में स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका :–

भारत में पी.आई.एल. नयी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को आरम्भ करने में कुछ मुकदमें जजों और वकीलों की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सरकारी एजेंसियों, की तिथियों को टालने वाले वकीलों और सम्भ्रान्त लोगों को यह अच्छा नहीं लगा।

निचले स्तर पर काम करने वाले स्वंयसेवी संगठनों के लिए यह एक बरदान साबित हुआ है। जनसमूह के अहिंसात्मक संघर्ष में कानूनी न्याय पाने में यह बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। सामाजिक कार्यकर्ता, स्वयंसेवी संगठन जो शोषण के विरुद्ध लड़ाई लड़ने और लोगों को मौलिक अधिकार दिलाने का सामाजिक कार्यवाही करते हैं उन्हें इसका अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 (Consumer Protection Act 1986):–

पूरा देश उपभोक्ता है जबकि कुछ लोग ही व्यापारी हैं। व्यापारी उपभोक्ताओं का शोषण कर ही आगे बढ़ता है। उपभोक्ताओं को शोषण मुक्त करने के लिए भारत सरकार ने 1986 में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम लाया । इस अधिनियम का विस्तार जम्मू कश्मीर छोड़कर बाकी राज्यों के लिए किया गया है। केन्द्रीय सरकार का यह कानून भारत सरकार उपबन्धित वस्तुओं के अतिरिक्त सभी माल (Goods) पर लागू माना जाएगा।

केन्द्रीय सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त किसी सामान की जांच के बाद ही किसी माल को खराब या, अपमिश्रण या हानिकारक माना जा सकता है कोई भी उपभोक्त या

उपभोक्ताओं का संगठन, केन्द्रीय या राज्य सरकार लिखित रूप से अपने अधिकारों के संरक्षण के लिए प्रार्थना पत्र दे सकता है। परिवाद किसी व्यापारी द्वारा अनुचित व्यापारिक व्यवहार या अवरोधक व्यापारिक व्यवहार, उपभोक्ताओं द्वारा क्रय किये माल में एक या अनेक त्रुटियाँ हैं, भाड़े या उपभोग के लिए सहमत सेवाओं में कोई कभी हैं, किसी पैकेट पर छपे मूल्य से अधिक मूल्य लिया है, जनता की सुरक्षा एवं संकटमय, और हानिकारक स्थिति की सम्भावना हो तो, किया जा सकता है। उपभोक्ता विवाद वह विवाद है जब कोई व्यक्ति जिसके विरुद्ध परिवाद दिया गया हो परिवाद में दिए गए तर्कों को स्वीकार करता है या नकारता है। जब किसी माल में कमी, खराबी या अशुद्धता का अनुभव होता है तभी कोई परिवाद दाखिल किया जाता है जिसके आधार पर विहित संस्थाओं द्वारा उसका निर्णय किया जाता है।

उपभोक्ताओं के कल्याण के लिए भारत सरकार ने उपभोक्ता संरक्षण परिषद का गठन किया है। 1986 के अधिनियम में भारत सरकार ने यह घोषणा किया कि एक उपभोक्ता संरक्षण परिषद होगा जिसके अनुपालन में उपभोक्ता संरक्षण नियमावली 1987 में आयी जिसके अनुसार केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद तथा कार्यवाही समूह का गठन हुआ। इस संगठन में कुल 150 सदस्य होंगे–

1. नागरिक आपूर्ति विभाग का प्रभारी मंत्री (पदेन अध्यक्ष)

2. नागरिक आपूर्ति विभाग में राज्य मंत्री

3. राज्यों में खाद्य एवं आपूर्ति विभाग के मंत्रीगण

4. संसद के आठ सदस्य

5. अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आयुक्त

6. उपभोक्ता हित से सम्बन्धित केन्द्रीय सरकारी विभागों के स्वायत्व संगठनों के प्रतिनिधि (20 से अधिक नहीं)

7. उपभोक्ता संगठनों या उपभोक्ताओं के प्रतिनिधिगण (35 से कम नहीं) 8. महिलाओं के प्रतिनिधि (10 से कम नहीं)

9. किसानों, व्यापारियों एवं उद्योग के प्रतिनिधिगण (20 से अधिक नहीं)

10. उपभोक्ता हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले सक्षम व्यक्तियों (15 से अधिक नहीं)

11. नागरिक आपूर्ति विभाग का सचिव जो केन्द्रीय परिषद का सचिव होगा।

परिषद की अवधि तीन वर्ष की होगी। कोई भी सदस्य अपने हस्ताक्षर सहित लिखित में त्यागपत्र अध्यक्ष को दे सकता है। रिक्तियाँ उसी सम्वर्ग से भरी जाएंगी।

केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद के उद्देश्य

केन्द्रीय परिषद का उद्देश्य उपभोक्ताओं के अधिकारों का संरक्षण करना और संप्रवर्तन करना होगा–

1. माल या सेवा जो जीवन और सम्पत्ति के लिए संकटमय हो के विपणन के विरुद्ध संरक्षित किया जाने वाला अधिकार।

2. माल या सेवा के गुण परिणाम अन्तःशक्ति, शुद्धता मानक और मूल्य के बारे में सूचित किये जाने का अधिकार ताकि अनुचित व्यापारिक व्यवहार के विरुद्ध उपभोक्ता को संरक्षित किया जा सके।

3. प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर माल के विभिन्न प्रकारों तक पहुंच जहाँ सम्भव हो, को सुनिश्चित करने का अधिकार।

4. यह चुने जाने और सुनिश्चित किए जाने का अधिकार कि उपभोक्ताओं के हितों का समुचित फोरमो पर सम्यक् विचारण किया जाएगा।

5. अनुचित व्यापारिक व्यवहार या अवरोधक व्यापारिक व्यवहार या उपभोक्ताओं के अनुचित शोषण के विरुद्ध कार्य करने का अधिकार।

6. उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार।

राष्ट्रीय उपभोक्ता संरक्षण आयोग :–

राष्ट्रीय आयोग, राज्य आयोग या जिला फोरम के पास विश्वास करने का कोई आधार हो कि कोई वहीं, कागजात, वस्तु, दस्तावेज जो कार्यवाही में पेश करने के लिए अपेक्षित है, क्षतिग्रस्त, विकृत, परिवर्तित, मिथ्याकृत या छिपाया जा रहा है वहाँ यह लिखित आदेश द्वारा किसी परिशर में प्रविष्ट होने और उसकी तलाशीं लेने के लिए किसी अधिकारी को अधिकृत किया जा सकता है। इस प्रकार अधिकृत अधिकारी बहियों, कागजातों, दस्तावेजों या वस्तुओं जैसा कि इस अधिनियम के प्रयोग के लिए अपेक्षित हो का अधिग्रहण कर सकता है। किन्तु ऐसे अधिकरण की सूचना 72 घंटे के अन्तर्गत राष्ट्रीय आयोग, राज्य आयोग या जिला फोरम को देना आवश्यक है।

राष्ट्रीय आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया :–

1. राष्ट्रीय आयोग मुख्यतः जिला फोरम द्वारा प्राप्त परिवाद में अधिकाधिक प्रक्रियाओं का अनुसरण करेगा।

2. पक्षकारों को निर्धारित तिथि पर उपस्थित होना आवश्यक है यदि पक्षकार उपस्थित नही होता है तो वह परिवाद खारिज किया जा सकता है या आयोग चाहे तो गुणावगुण के आधार पर उसे निस्तारित कर सकता है।

जिला फोरम –अधिनियम के अन्तर्गत जिला फोरम और राज्य आयोग की स्थापना की जाती है। जिला फोरम प्रत्येक जिले में कार्य करता है।

जिला फोरम की संरचना – किसी भी जिला फोरम में निम्नलिखित लोग सम्मिलित होंगे–

1. कोई भी व्यक्ति जो जिला जज है या रह चुका है या होने के लिए योग्यता रखता है। राज्य सरकार द्वारा नामित किया जाएगा और वह फोरम का अध्यक्ष होगा।

2. दो अन्य सदस्य जो योग्य, सत्यनिष्ठा वाले व्यक्ति होंगे और जिनका अर्थशास्त्र, विधि, वाणिज्य, लेखाकर्म, उद्योग, लोक कार्य या प्रशासन का पर्याप्त ज्ञान और अनुभव होगा या इससे सम्बंधित समस्याओं के सम्बंध में कार्यवाही करने की योग्यता होगी और उनमें से एक महिला होगी।

3. प्रत्येक नियुक्ति राज्य सरकार चयन परिषद की अनुशंसा पर होगा जिसमें राज्य (i) आयोग का अध्यक्ष, (ii) राज्य के विभाग का सचिव, (iii) राज्य के उपभोक्ता कार्यकलाप विभाग का सचिव।

4. जिला फोरम का प्रत्येक सदस्य पांच वर्षों की अवधि के लिए या 65 वर्ष की आयु तक पद धारण करेगा।

5. जिला फोरम के सदस्यों का वेतन या मानदेय, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित होंगे।

जिला फोरम का अधिकार :–

1. अधिनियम के अन्य प्राविधानों के अधीन रहते हुए जिला फोरम को ऐसे विवादों को ग्रहण करने का अधिकार होगा जहाँ माल या सेवा का प्रतिकर एक लाख रुपये से कम हो।

2. विपक्षी पक्षकार वास्तव में और स्वेच्छया निवास करता है, या कारोबार करता है या शाखा रखता है या लाभ के लिए व्यक्तिगत रूप से कार्य करता है।

परिवाद करने का ढंग :–

1. बेंचे गये किसी माल या प्रदान किए गए किसी सेवा के सम्बन्ध में परिवाद जिला फोरम में प्रस्तुत किया जा सकेगा।

जिला फोरम की संरचना – किसी भी जिला फोरम में निम्नलिखित लोग सम्मिलित होंगे–

1. कोई भी व्यक्ति जो जिला जज है या रह चुका है या होने के लिए योग्यता रखता है। राज्य सरकार द्वारा नामित किया जाएगा और वह फोरम का अध्यक्ष होगा।

2. दो अन्य सदस्य जो योग्य, सत्यनिष्ठा वाले व्यक्ति होंगे और जिनका अर्थशास्त्र, विधि, वाणिज्य, लेखाकर्म, उद्योग, लोक कार्य या प्रशासन का पर्याप्त ज्ञान और अनुभव, होगा या इससे सम्बंधित समस्याओं के सम्बंध में कार्यवाही करने की योग्यता होगी और उनमें से एक महिला होगी।

3. प्रत्येक नियुक्ति राज्य सरकार चयन परिषद की अनुशंसा पर होगा जिसमें राज्य (i) आयोग का अध्यक्ष, (ii) राज्य के विभाग का सचिव, (iii) राज्य के उपभोक्ता कार्यकलाप विभाग का सचिव।

4. जिला फोरम का प्रत्येक सदस्य पांच वर्षों की अवधि के लिए या 65 वर्ष की आयु तक पद धारण करेगा।

5. जिला फोरम के सदस्यों का वेतन या मानदेय, राज्य सरकार द्वारा निर्धारित होंगे।

<u>जिला फोरम का अधिकार</u> :–

1. अधिनियम के अन्य प्राविधानों के अधीन रहते हुए जिला फोरम को ऐसे विवादों को ग्रहण करने का अधिकार होगा जहाँ माल या सेवा का प्रतिकर एक लाख रुपये से कम हो।

2. विपक्षी पक्षकार वास्तव में और स्वेच्छया निवास करता है, या कारोबार करता है या शाखा रखता है या लाभ के लिए व्यक्तिगत रूप से कार्य करता है।

<u>परिवाद करने का ढंग</u> :–

1. बेंचे गये किसी माल या प्रदान किए गए किसी सेवा के सम्बन्ध में परिवाद जिला फोरम में प्रस्तुत किया जा सकेगा।

2. उपभोक्ता जिसको ऐसा माल बेचा जाता है, या दान किया जाता है या इस हेतु सहमति है या ऐसी सेवा प्रदान की जाती है।

3. किसी मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संगम द्वारा, चाहे उपभोक्ता जिसको माल बेचा गया है या परिवाद किया गया है या सेवा प्रदान की गयी है या इस हेतु सहमति है।

4. केन्द्र या राज्य सरकार द्वारा।

<u>परिवाद प्राप्ति पर प्रतिक्रिया</u> :–

जिला फोरम, परिवाद, यदि यह किसी माल से सम्बन्धित है की प्राप्ति पर–

1. परिवाद की एक प्रतिलिपि परिवाद में वर्णित विरोधी पक्ष को तीन दिनों की अवधि या 15 दिनो की अवधि जैसा कि जिला फोरम द्वारा स्वीकृत हों के अन्दर मामले का अपना कथन देने के लिए निर्देश देते हुए भेजेगा।

2. यदि विरोधी पक्षकार प्रतिवाद की प्राप्ति पर प्रतिवेदन करता है, परिवाद करताहै, या कार्यवाही नहीं करता है वहाँ जिला फोरम निर्देशानुसार उपभोक्ता विवाद निपटाने की कार्यवाही करेगा।

3. जहाँ माल में खराबी को बिना उचित पर्यवेक्षण या विश्लेषण की आवश्यकता होती है को भेज देगा जहाँ से रिपोर्ट 45 दिनों के अन्तर्गत आ जाता है।

4. प्रयोगशाला में विश्लेषण या जांच में जो खर्च आएगा उसका भुगतान परिवादी से लेकर खाते में जमा करा लिया जाएगा।

5. यदि पक्षकारों में से कोई विश्लेषण या जांच की सत्यता पर प्रतिवाद करता है, या प्रयोगशाला के परीक्षण या विश्लेषण की प्रक्रिया को त्रुटिपूर्ण बतलाता है तो पक्षकार से लिखित आक्षेप प्राप्त करेगा।

6. उसके बाद जिला फोरम दोनों पक्षकारों को सुनने का अवसर प्रदान करेगा और धारा 14 के अन्तर्गत आदेश करेगा।

निम्नलिखित नामलों में जिला फोरम को वाद का परीक्षण करते समय वहीं शक्तियाँ प्राप्त होगी, जो सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के अधीन सिविल न्यायालय में निहित है।

1. किसी प्रतिवादी या साक्षी को समन करना, उपस्थित करना और शपथ पत्र पर साक्षी की परीक्षा कराना।

2. किसी दस्तावेज या साक्ष्य के रूप में पेश किए जाने योग्य अन्य तात्विक का प्रकटीकरण और पेश करना।

3. शपथपत्र पर साक्ष्य ग्रहण करना।

4. समुचित प्रयोगशाला या किसी अन्य सुसंगत स्रोत से सम्बद्ध विश्लेषण या परीक्षण की रिपोर्ट की अपेक्षा करना।

5. किसी साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन नियुक्त करना।

<u>राज्य आयोग की संरचना</u> :–

प्रत्येक राज्य आयोग में निम्नलिखित लोग सम्मिलित किए जाएंगे–

1. राज्य सरकार द्वारा नियुक्त कोई व्यक्ति, जो उच्च न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका है, इसका अध्यक्ष होगा, पदस्थ, न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए मुख्य न्यायाधीश की सहमति चाहिए।

2. दो अन्य सदस्यों योग्यता सात्यनिष्ठा या प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति होंगे और जिनके पास अर्थशास्त्र, विधि, वाणिज्य, लेखाविधि, उद्योग, सार्वजनिक मामले या प्रशासन से सम्बन्धित समस्याओं का पर्याप्त ज्ञान या अनुभव है या निपटाने में क्षमता का प्रदर्शन किया है जिसमें से एक महिला होगी।

यह सभी नियुक्तियाँ राज्य सरकार की चयन समिति की संस्तुति पर की जाएगी।

<u>राज्य सरकार की चयन समिति</u> :–

1. राज्य आयोग का अध्यक्ष–अध्यक्ष

2. राज्य के विधि विभाग का सचिव –सचिव

3. राज्य के उपभोक्ता कार्यकलाप विभाग को देखने वाला भारसाधक सचिव – सदस्य

राज्य आयोग के अधिकार :–

1. परिवाद को जहाँ माल या सेवाओं और दावाकृत प्रतिकर कर मूल्य एक लाख से अधिक और दस लाख से कम हो।

2. राज्य के अन्तर्गत किसी जिला फोरम के विरुद्ध अपील।

3. जिला फोरम के अन्तर्गत लम्बित मामले में समुचित आदेश देना या ऐसे मामलों जहाँ जिला फोरम ने अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर आदेश दिया है सुनवाई करना आदि।

इस प्रकार उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत जिला राज्य और केन्द्र में आयोग बने हुए हैं जहाँ उपभोक्ताओं को न्याय मिल सकता है। लेकिन सारा कानून और अधिनियम रहते हुए भी हम नित्य मिलावटी सामान खरीदते हैं, दूकानदार बेचता है, अधिक मूल्य देते हैं और स्वयं शोषण का शिकार हो रहे हैं। बड़े शहरों में कुछ बड़ी दूकानों के कैशमेमो आदि मिल जाते हैं किन्तु छोटे शहरों में न कोई बिल बाउचर मांगता है न दूकानदार देने की जहमत उठाता है। इससे होता है कि हम आए दिन व्यापारियों के शोषण का शिकार हो रहे हैं। इसलिए उपभोक्ताओं को शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए जागरूकता और ज्ञान की आवश्यकता है जिससे सही सामान, सही मूल्य और सही समय पर कार्यवाही करने को लोग तत्पर हो सके।

किशोर न्याय अधिनियम 1986 (Juvenile Justice Act 1986) :–

1. **(i) किशोर कल्याण बोर्ड** – राज्य सरकार राज पत्र में अधिसूचना द्वारा किसी विशिष्ट क्षेत्र के लिए एकया अधिक कल्याण बोर्ड गठन कर सकता है।

2. बोर्ड का एक अध्यक्ष होगा और सदस्य होंगे जिनमें एक महिला होगी। प्रत्येक ऐसे सदस्य में दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 के अधीन मजिस्ट्रेट के शक्तियाँ होंगी।

3. बोर्ड मजिस्ट्रेट के न्यायपीठ के रूप में कार्य करेगा और उसे दंड प्रक्रिया संहिता 1973 द्वारा महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को प्रदत्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी।

(ii) किशोर न्यायालय :–

1. दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक या अधिक किशोर न्यायालय स्थापितकर सकेगी अवचाही किशोरों के सम्बंध में इस अधिनियम के अधीन ऐसे को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग कर कर्तव्य का निर्वहन करने के न्यायालय लिए गणित कर सकेगी।

(iii) किशोर न्यायालय :– न्याय गठित करने वाले यथास्थिति उतने महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेटों से मिलकर बनेगा जिसे नियुक्त करना राज्य ठीक समझे। इनमें से एक प्रधान मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करेगा। प्रत्येक ऐसे न्यायधीश को दण्ड

प्रक्रिया संहिता 1973 (72 का 2) द्वारा महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्राप्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी।

(iv) प्रत्येक किशोर न्यायालय :– की सहायता निश्चित योग्यता रखने वाले दो अवैतनिक सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा किया जाएगा, जिसमें एक महिला होगी, जिनकी नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा की जाएगी।

(v) किशोर ग्रह :– (1) उपेक्षित किशोरों को इस अधिनियम के अन्तर्गत रखने के लिए उतनी संख्या में किशोर गृह स्थापित कर सकेगी जितने की आवश्यक हों।

(2) यदि राज्य सरकार की यह राय है कि अनुरक्षित गृह के अतिरिक्त किसीसंस्था में उपेक्षित किशोरों को रखना ठीक है तो इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए किसी संस्था को किशोर गृह के रूप में प्रमाणित कर सकेगी।

(3) प्रत्येक किशोर गृह जिसमें राज्य सरकार इस अधिनियम के अन्तर्गत उपेक्षित किशोर को भेजती है उसमें आवास सुविधा भरण पोषण, शिक्षा, व्यवसायिक प्रशिक्षण और पुनर्वास की सुविधाओं की व्यवस्था करेगा तथा उस किशोर के चरित्र योग्यताओं के विकास के लिए सुविधाओं की व्यवस्था करेगा तथा किशोर को इस प्रकार का प्रशिक्षण देगा जिससे कि वह नैतिक खतरों या शोषण से अपना संरक्षण कर सके तथा उसके सर्वांगीण एवं व्यक्तित्व के विकास के लिए अन्य कार्य भी करेगा जो आवश्यक हो।

विशेषगृह :–

1. राज्य सरकार उतने विशेष गृह स्थापित कर सकेगी जितनी कि अपचारी किशोरों के लिए आवश्यक है।

2. जहाँ राज्य सरकार को यह लगता है कि विशेषगृह से अलग किसी संस्था में अपचारी किशोरों को रखना अच्छा होगा तो उस संस्था को उस अधिनियम के प्रयोजन के लिए विशेषगृह के रूप में प्रमाणित कर सकेगी।

3. प्रत्येक विशेषगृह में जहाँ अपचारी किशोरों को भेजा जाता है आवास सुविधा, भरण–पोषण, और शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और पुनर्वास की सुविधाओं के साथ उसके चरित्र और योग्यताओं के विकास की सुविधा प्रदान करेगा तथा उसके सर्वांगीण विकास और व्यक्तित्व के विकास को सुनिश्चित करने के लिए सुविधा प्रदान करेगा।

4. बनाये गये नियमों में अपचारी किशोरों को उनकी आयु और उनके द्वारा किए गए अपराधों की प्रकृति के अनुसार वर्गीकरण और पृथक्करण के लिए भी प्रबन्ध किया जा सकता है।

संप्रेषण गृह :–

1. राज्य सरकार किसी किशोरों के सम्बन्ध में इस अधिनियम के अन्तर्गत जांच लम्बित रहने के दौरान उन्हें अस्थायी तौर पर रखने के लिए उतनी संख्या में संप्रेषण गृह स्थापित कर सकेगी और बनाए रख सकेगी जितना कि आवश्यक हो।

2. राज्य सरकार यदि आवश्यक समझती है कि दूसरी संस्थाओं में भी अपचारी किशोरों को रखा जा सकता है तो उस संस्था को प्रमाण पत्र दे सकती है।

3. प्रत्येक संप्रेषणगृह जिसमें कोई किशोर अधिनियम के अन्तर्गत भेजा जाता है किशार के लिए निवास सुविधा भरण–पोषण, चिकित्तीय परीक्षण और उपचार की सुविधाओं के साथ उसके लिए उपयोगी उपजीविका सुविधाओं की भी व्यवस्था करेगा।

<u>पाश्चातवर्ती देखरेख संगठन</u> :–

1. पश्चातवर्ती देखरेख सवंर्गों की स्थापना एवं उनको मान्यता प्रदान करने के लिए राज्य सरकार प्रबन्ध कर सकेगी जो इस अधिनियम के अन्तर्गत उनके मूल्यों के निष्पादन के लिए उनके द्वारा प्रयोग की जा सकेगी।

2. पश्चातवर्ती देखरेख कार्यक्रम की ऐसी स्कीम के लिए अनुसरण पश्चातवर्ती देखरेख के ऐसे संगठनों द्वारा किया जाएगा जो किशोर गृह या विशेष गृह से किशोरों को छोड़ने के पश्चात् उनकी देखरेख के प्रयोजन के लिए तथा उन्हें इमानदार परिश्रमी और उपयोगी जीवन बित्ताने के लिए समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए हो।

3. किशोर गृह या विशेष गृह छोड़े जाने से पूर्व प्रत्येक किशोर के सम्बन्ध में परिविक्षाधिकारी द्वारा ऐसे किशोर की पश्चातवर्ती देखरेख की कालावधि, उसके पर्यवेक्षण के सम्बन्ध में रिपोर्ट की तैयारी के बारे में परिवीक्षाधिकारी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए प्रबन्ध कर सकेगी।

4. ऐसे पश्चातवर्ती देखरेख संगठनों द्वारा बनाए रखी जाने वाली सेवाओं के स्तर और प्रकृ ति के लिए प्रबन्ध कर सकेगी।

5. ऐसे अन्य विषयों के लिए उपबन्ध कर सकेगी जो किशोरों के पश्चातवर्ती देखरेख कार्यक्रम का प्रभावी रूप से निष्पादन करने के लिए आवश्यक है।

<u>किशोरों के सम्बन्ध में विशेष अपराध</u> :–

1. किशोरों के प्रति क्रूरता के लिए दण्ड रू जो कोई किशोर पर नियन्त्रण रखते हुए ऐसी रीति से उसका परित्याग करेगा, मानसिक या शारीरिक कष्ट देने के लिए किशोर पर हमला करेगा उसे उच्छन्न करेगा या जानबूझकर उसकी उपेक्षा करेगा या उस पर हमला करेगा उसे 6 माह तक की कारावास की सजा और दण्ड दिया जा सकता है।

2. दण्डनीय अपराध तबतक नहींमाना जाता जब तक कि परिवाद राज्य सरकार या उसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी के पूर्व अनुमोदन से फाइल न किया गया हो।

<u>भीख मांगने के लिए किशोरों का नियोजन</u> :–

जो कोई भीख मांगने के लिए किशोरों को नियोजित या प्रयोग करेगा या किशोर से भीख मंगवाएगा वह तीन वर्षों तक के कारावास का दण्ड या आर्थिक दण्ड पाएगा।

इसी प्रकार मादक पदार्थ या मन प्रभावी पदार्थ किशोरों को देने वालों को भी 3 वर्ष की कैद और अर्थदण्ड का प्राविधान इस अधिनियम के अन्तर्गत किया गया है। जो किशोर कर्मचारियों का शोषण करेगा, उसे वेतन नही देगा, उसे भी तीन वर्ष तक का कारावास का प्राविधान इस अधिनियम के अन्तर्गत किया गया है।

<u>अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम (1956)</u><u>Immoral Traffic (Prevention)Act 1956</u> :– वेश्यावृत्ति भारत ही नही विश्व के अनेक देशों में है किन्तु जबरदस्ती वेश्यावृत्ति कराने के लिए बालिकाओं और महिलाओं को प्रेरित करना एक जघन्य अपराध है अनैतिक व्यापार निवारण के लिए बालिकाओं, महिलाओं और लड़कियों को इस व्यापार में जबरदस्ती ढकेलने से रोकना अत्यंत आवश्यक है परित्यक्ता घरों से भगायी गयी या जबरदस्ती, लालच देकर महिलाओं को इस व्यापार में उतारा जाता है जहाँ से निकलना बहुत ही दुष्कर है। इस अधिनियम की कुछ मुख्य बातें मूलरूप में आगे दिया जा रहा है–

<u>वेश्यावृत्ति बनाए रखने अथवा परिसर को वेश्यागृह के रूप में प्रयोग करने के लिए दण्ड</u> :–

1. कोई व्यक्ति जो वेश्या गृह को बनाए रखता है या प्रबन्ध करता है अथवा बनाए रखने या प्रबन्ध करने में सहायता करता है या कार्य करता है प्रथम दोष सिद्धि पर एक से तीन वर्ष, द्वितीय दोष सिद्धि पर तीन से पांच वर्ष के कठोर कारावास की सजा तथा आर्थिक जुर्माना किया जायेगा।

2. कोई व्यक्ति जो किसी परिसर का किरायेदार, पट्टेदार, अधिभोगी या मुखिया होते हुए भी परिसर या उसके किसी भाग को वेश्यावृत्तिगृह के रूप में प्रयोगकरता है या जानते हुए भी किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा प्रयोग होने देता है प्रथम दोष सिद्धि पर न्यूनतम दो वर्ष तक के कैद और 3000 का जुर्माना हो सकता है तथा द्वितीय दोष सिद्धि की दशा में पांच वर्ष तक की सजा और जुर्माना का भागीदार होगा।

वेश्यावृत्ति के उपार्जन पर जीविका निर्वाह के लिए दण्ड रू 18 वर्ष से अधिक आयु का कोई भी व्यक्ति जो कानून अथवा किसी अन्य व्यक्ति की वेश्यावृत्ति से उपार्जित धन पर या अंशतः जीवन निर्वाह करता है उसे दो वर्ष तक की कैद की सजा और अर्थदण्ड दिया जा सकता है। जहाँ ऐसा उपार्जन बालक या अल्प वयस्क से सम्बंधित हो वह सात वर्ष से अधिक और दस वर्ष तक की कैद की सजा तथा जुर्माने से दंडित किया जाएगा।

<u>सुधार संस्था में निरोध</u> :–

1. धारा 7 या 8 के अधीन अपराध का दोषी पायी गयी हो।

2. अपराधी के चरित्र स्वास्थ्य की दशा और मानसिक स्थिति तथा अन्य परिस्थितियों को देखते हुए उसके सुधार के लिए सुधार संस्था में निरुद्ध किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में न्यायालय को दो वर्षों से अधिक और पांच वर्षे से कम के लिए सुधार गृह में भेजने का अधिकार हो ऐसा आदेश पारित करते समय।

3. न्यायालय अपराधी को सुनवाई का अवसर देगा और किसी अभ्यावेदन पर तथा परिवीक्षा अधिनियम 1958 के अधीन परिवीक्षाधिकारी की रिपोर्ट पर ध्यान देते हुए कोई निर्णय करेगा।

4. इन नियमों के अधीन रहते हुए राज्य सरकार या उसका कोई अधिकारी आदेश के छः माह बाद किसी समय यदि उसे यह समझ में आ जाय कि ऐसी सम्भावना है कि उद्यमी लाभप्रद और उद्यमी जीवन व्यतीत करेगा। सशर्त या बिना शर्त के मुक्त कर सकेगा।

<u>संरक्षण गृह और सुधार संस्थाएँ</u> :–

1. राज्य सरकार अपने विवेक से उतने संरक्षण गृह और सुधार संस्थाएँ स्थापित कर सकेगा जितना कि आवश्यक समझे।

2. राज्य सरकार के अतिरिक्त कोई व्यक्ति या अधिकारी इस अधिनियम के प्रारम्भ होने के पश्चात् कोई सुधार गृह या संरक्षण गृह स्थापित नहीं कर सकता है।

3. राज्य किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को आवेदन करने पर सुधार गृह के अनुरक्षण या यथास्थिति के लिए आदेश जारी कर सकेगा। इस प्रकार की जारी होने वाली अनुज्ञप्ति में राज्य सरकार द्वारा आवश्यक शर्ते निर्धारित की जा सकेगी। किन्तु शर्त में वह अपेक्षा की जाएगी कि संस्था के संरक्षण गृह या सुधार संस्था में महिलाएँ ही कार्यरत होंगी।

4. आदेश न जारी करने के पूर्व राज्य सरकार किसी अधिकारी या प्राधिकारी से आवेदन के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी हासिल करने के लिए अन्वेषण कर सकेगा तथा अधिकारी या प्राधिकारी ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण करेंगे जैसा राज्य सरकार चाहती है।

5. आदेशों में समय निर्धारित होगा उसे नवीनीकृत करने के लिए अलग से प्रार्थना पत्र देना होगा ।

6. जिस व्यक्ति या प्राधिकारी को सरंक्षण गृह चलाने की अनुमति प्रदान किया गया है यदि किसी नियम या शर्त को भंग करता है या संरक्षण गृह और सुधार संस्था की व्यवस्था प्रबंधन सही न हो तो उस अनुमति को समाप्त किया जा सकता है।

भारत में महिलाओं और बच्चों पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ स्वतंत्रता के पूर्व से समाज सुधारकों ने अनेक आन्दोलन चलाए। स्त्रियों और बच्चों में अनैतिक व्यापार कानून 1956 महिलाओं के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण योगदान करता है। 1913 में भारत ने संयुक्त राष्ट्र को सूचित किया कि यहाँ सरकार द्वारा मान्य वेश्यालय है और न तो वेश्याओं का कोई आंकड़ा है राज्यों ने अपनेअधीन कानून का निर्माण किया था सभी कानून इस बात को स्वीकार करते थे कि वेश्यालय कोई बुरी बात नहीं है। केवल यह सार्वजनिक स्थल पर नही होना चाहिए। इस दिशा में भारत सरकार ने 1956 में अधिनियम बनाया जिसे 1 मई 1958 से लागू माना जाता है। इस कानून के अन्तर्गत वेशयालय चलाना, वेश्यावृत्ति की आय पर निर्भर रहना, वेश्यावृत्ति के लिए लड़कियों के या औरतों को फुसलाने, वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से लड़कियों को बेंचना, उन्हें वेश्यालय के आसपास ठहराना आदि गतिविधियाँ दण्डनीय अपराध है।

कानून बहुत से बने हैं किन्तु इनका पालन नहीं होता। लड़कियों, लड़कों और महिलाओं को अनैतिक व्यापार सामाजिक कोढ़ है और उस कोढ़ को दूर करने के लिए सामाजिक चेतना की आवश्यकता है। केवल दण्ड का भय समाज की इस कोढ़ को समाप्त नहीं कर सकता इसके लिए समाज में शिक्षा, जागरूकता और पुनर्वास की व्यवस्था करने की महती आवश्यकता है।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 :—

अस्पृश्यता भारतीय समाज की कोढ़ रहा है और है। अस्पृश्यता समाज में वैमनस्य और असमानता का वातावरण उत्पन्न करता है। अनुसूचित जाति के लोगों को तालाब, कुंएं झरने, शिक्षण संस्थान, सार्वजनिक अस्पताल, मन्दिरों पूजागृहों आदि में छुआछूत के कारण रोक लगी रही जिसे समाप्त करने के लिए भारतीय संविधान में व्यवस्था की गयी है। भारतीय संविधान की इसी व्यवस्था के आधार पर अस्पृश्यता के कोढ़ को समाप्त करने के लिए नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 में लाया गया। इसकी कुछ मुख्य बातें निम्नवत् हैं—

धार्मिक निर्योग्तया लागू करने के लिए दण्ड :—

1. किसी ऐसे सार्वजनिक पूजा स्थल में प्रवेश करने से जो उसी धर्म को मानने वालों या इससे सम्बंधित अन्य के लिए खुला हो।

2. किसी लोक पूजा स्थान में पूजा या प्रार्थना या कोई धार्मिक सेवा अथवा किसी पवित्र तालाब, कुएँ जल स्रोत नदी झील में स्नान या उसके जल का उपयोग करने के लिए उसी धर्म के लोगों को अस्पृश्यता के आधार पर रोकता है वह कम से कम एक माह अधिक से अधिक छः मास कारावास की सजा तथा एक सौ से पांच सौ रुपये तक का आर्थिक दण्ड का भागी होगा।

सामाजिक निर्योग्यताएँ लागू करने के लिए दण्ड :—

जो कोई किसी व्यक्ति के विरुद्ध निम्नलिखित के सम्बंध में कोई अस्पृश्यता . के आधार पर लागू करेगा उस कम से कम एक माह और अधिक से अधिक छः मास की अवधि का कारावास तथा एक सौ से पांच सौ रुपये तक का अर्थदण्ड दिया जाएगा—

1. किसी दूकान उपहारगृह, होटल, या सार्वजनिक मनोरंजन स्थल में प्रवेश करना।

2. किसी सार्वजनिक उपहारगृह, होटल, धर्मशाला, सराय, या मुसाफिर खानों में जन साधारण या उसके किसी वर्ग के व्यक्तियों के, जिसका वह वर्ग हो उपयोग के लिए रखे गये वस्तुओं या बर्तनों को उपयोग करना।

3. कोई व्यवसाय करना या उपजीविका या किसी कार्य में नियोजन।

4. ऐसी किसी नदी, जलधारा, जल स्रोत, कुएँ, तालाब हौज, पानी के नल, जल के अन्य स्थान का या किसी स्नानघर, कब्रिस्तान या श्मशान, स्वच्छता सम्बंधी सुविधा, सड़क या रास्ते या लोक अभिगम के अन्य स्थान का जिसका उपयोग करने के लिए जनता के अन्य

सदस्य या उसके किसी विभाग के वह व्यक्ति है, अधिकारवान हो उपयोग करना या उसका प्रवेश रोकना।

5. राज्य निधियों से पूर्णतः या अंशतः बने सार्वजनिक प्रयोजन के लिए बने समर्पित स्थान का उपयोग करने से रोकना आदि।

6. सार्वजनिक सवारी में प्रवेश पर रोक आदि।

<u>दहेज प्रतिरोध अधिनियम Dowary Prohitition Act 1961</u> :–

दहेज प्रथा भारतीय समाज में महिलाओं पर अत्याचार का एक बहुत बड़ा स्रोत है। आए दिन दहेज प्रताड़ना, दहेज के कारण हत्या, दहेज लाने के लिए बहुओं पर दबाव डालने आदि के समाचार विभिन्न माध्यमों में दिखलाई पड़ते हैं। इसी को दृष्टि में रखकर 1961 में दहेज प्रतिरोध अधिनियम आया। कानूनों से समाज में व्याप्त व्याधियों को दूर नहीं किया जा सकता फिर भी यह एक सरकारी प्रयास था। इस अधिनियम की कमियों को दूर करने के लिए 1984 में भी दहेज निषेध अधिनियम लाया गया। जिसमें यह आवश्यक माना गया कि दूल्हन दूल्हे को क्या उपहार मिला। उपहारों की पूरी सूची तैयार की जाएगी जिसमें यह भी उल्लेख होगा कि दूल्हा और दूल्हन का उपहार देने वाले से क्या सम्बंध है। इस पर दोनों के हस्ताक्षर आवश्यक होंगे। इस अधिनियम कुछ मुख्य विचार निम्नलिखित प्रकार से हैं–

(1) <u>दहेज देने या दहेज लेने के सम्बन्ध में</u> :–

1. यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम को लागू होने के पश्चात् दहेज देगा, या लेगा अथवा दहेज लेने और देने के लिए प्रेरित करेगा तो उसे पांच वर्ष तक की कैद और 15000 तक का नगद जुर्माना देना होगा।

2. बिना किसी मांग के बधू को प्राप्त हुए भेंट पर यह कानून लागू नहीं होता किन्तु इसके लिए इन भेंटों की एक सूची अवश्य बनी होनी चाहिए जिस पर वर–वधू दोनों के हस्ताक्षर हों।

3. वर को दिए जाने वाले भेंट भी यदि सूचीबद्ध है तो उस पर कोई भी अपराध लागू नहीं होता।

4. दहेज मांगना यदि कोई व्यक्ति वधू या वर माता–पिता या किसी रिश्तेदार से दहेज की मांग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से करता है तो छः माह से अधिक और दो वर्ष से कम की सजा दी जा सकती है और इसके लिए जुर्माना दस हजार रुपये तक हो सकता है।

इस अधिनियम के अतिरिक्त (दहेज प्रतिबंध वर–वधू भेंट सूची) 1985 के अन्तर्गत–

1. जो भेंट वधू को मिले उसकी एक सूची वधू के पास होनी चाहिए।

2. जो भेंट वर को मिले उसकी एक सूची वर के पास विवाह के समय या उसके पूर्व तैयार की जाएगी। इसमें प्रत्येक भेंट का संक्षिप्त विवरण होगा।

3 उस व्यक्ति का नाम जिसने भेंट दिया है।

4. वर या वधू के नातेदारों के सम्बन्धों का विवरण।

बन्धित श्रम पद्धति उन्मूलन अधिनियम 1976 Bonded Labour System Abolition Act 1976 :-

बन्धुआ मजदूरी प्रणाली का आरम्भ सामंतकालीन और सामन्ती सोच पर आधारित है। आर्थिक रूप से शोषित, असहाय एवं कमजोर वर्ग के लोग इस प्रकार के शोषण के शिकार हैं। असमान आर्थिक संरचना इन सारे कारणों की जिम्मेदार हैं। राष्ट्रीय आयोग के अनुसार, बन्धुआ श्रमिक की परिभाषा निश्चित समय के लिए नियत अथवा आजीवन अथवा कुछेक मामलों में पिता से पुत्र को उत्तराधिकारी रूप में प्राप्त ऋण बंधक के अर्थ में की जा सकती है। भारतीय सामाजिक विज्ञान स्कूल ने बंधुआ श्रम की परिभाषा ऋणी एवं ऋणदाता के मध्य एक सामाजिक समझौता बतलाया है जिसके अधीन ऋणी ऋण के किसी अंश, अथवा ब्याज जब तक ऋण का भुगतान नही हो जाता के बदले ऋणदाता की मजदूरी करने अथवा वैयक्तिक सेवा करने के लिए सहमत होता है।

अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयुक्त ने बन्धुआ श्रम का अर्थ बतलाते हुए कहा है, ''व्यक्ति किसी भी जाति या समुदाय से किसी समझौते के अधीन बिना वेतन अथवा निर्धारित न्यूनतम वेतन से कम मामूली वेतन पर ऋणदाता के लिए कार्य करने हेतु विवश अथवा आंशिक रूप से बाध्य होते हैं।''

बंधित श्रम पद्धति उन्मूलन अधिनियम 1976 के द्वारा बंधित श्रम पद्धति की परिभाषा निम्नलिखित रूप से की गयी है–

बंधित श्रम से बलात् श्रम या मागतः बलात् श्रम की पद्धति अभिप्रेत है जिसके अधीन ऋणी लेनदार से इस आशय से करार करता है या जिसमें ऐसा करार किया है या जिसके सम्बंध में यह उपधारणा की जाती है कि उसने ऐसा करार किया है कि–

1. उसके द्वारा या उसके पारम्परिक पूर्व पुरुषों या वंशजों में से किसी के द्वारा प्राप्त उधार के प्रतिफल में और ऐसे अग्रिम पर देय ब्याज के प्रतिफल में।

2. किसी रूढ़िगत या सामाजिक बाध्यता के अनुसरण में।

3. किसी ऐसी बाध्यता के अनुसरण में जो उत्तराधिकार द्वारा उसको प्राप्त हुई है।

4. उसके द्वारा या उसके परम्परागत पुरुषों या वंशजों में से किसी के द्वारा प्राप्त किसी आर्थिक प्रतिफल के लिए।

5. किसी विशेष जाति समुदाय में उसके लेने के कारण वह स्वयं या अपने कुटुम्ब के किसी सदस्य अथवा अपने ऊपर आश्रित किसी व्यक्ति के द्वारा ऋणदाता की मजदूरी अथवा सेवा निर्धारित समय अथवा अनिर्धारित समय तक बिना वेतन अथवा नाम मात्र वेतन पर करेगा

अथवा भारतीय क्षेत्र में स्वतंत्रता पूर्वक घूमने का परित्याग कर देगा, अथवा अपने परिवार के किसी सदस्य अथवा अपने ऊपर आश्रित किसी व्यक्ति के श्रम द्वारा उत्पादित किसी उत्पाद अथवा सम्पत्ति को बाजार मूल्य पर विक्रय करने अथवा उसके उपयोग करने के अधिकार को छोड़ देगा। इस प्रकार बंधुआ श्रम के दो अनिवार्य तत्व है– (1) ऋणग्रस्तता (2) बाधित ऋण। इसका तात्पर्य यह है कि बंधुआ श्रमिक वह है जो ऋण के बदले स्वयंको अथवा कभी किसी परिवार के सदस्य को बन्धक रख देता है।

<u>बन्धित ऋण को वापस करने के दायित्व की समाप्ति</u> :–

1. इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी बंधित ऋण को प्रतिसंदाय करने या ऐसे प्रारम्भ के पूर्व चुकता न किए गए किसी बंधित ऋण के किसी भाग का प्रति सदस्य के लिए बंधुआ श्रमिक का प्रत्येक दायित्व समाप्त हो जाता है।

2. इस अधिनियम के पश्चात् किसी बंधित ऋण या उसके किसी भाग की वसूली के लिए कोई वाद या अन्य कार्यवाही नहीं की जा सकती।

3. बंधित ऋण की वसूली के लिए प्रत्येक डिग्री या आदेश यदि पारित हुआ है, तो इस अधिनियम के लागू होने के बाद पूर्णतः चुकता समझा जाता।

4. यदि भुगतान के लिए कोई कुर्की की गयी हो या कुर्की का आदेश दिया गया हो जिसका बंधुआ श्रमिक की कोई सम्पत्ति अधिगृहीत की गयी हो वह बंधुआ श्रमिक को वापस कर दिया जाएगा।

5. यदि ऋणदाता ने बंधित मजदूर या उसके परिवार के किसी सदस्य की भूमि ऋण के बदले अपने कब्जे में ले ली गयी हो उसे अधिनियम के लागू होने के बाद यथाशीघ्र वापस कर दिया जाएगा।

6. यदि बंधुआ मजदूर की कोई सम्पत्ति ऋणदाता वापस नहीं कर रहा है तो इसके लिए विहित अधिकारी को सूचित किया जाएगा और विहित अधिकारी उसे कब्जा दिलाने में सहायता करेगा।

7. ऋण की भरपायी के लिए यदि कोई बंधुआ मजदूर कारावास में भेज दिया गया है उसे तत्काल जेल से छुड़ा लिया जाएगा।

8. बंधुआ मजदूर की वह सारी सम्पत्ति जो बन्धक हो उसे मुक्त कर दिया जाएगा।

<u>बंधुआ श्रम प्रणाली की समाप्ति हेतु उपाय</u> :–

इस प्रथा को समाप्त करने के लिए प्रयास ब्रिटिश शासन में भी किए गए अनेक सम्मेलनों में जैसे श्रम सम्मेलन 1956 आदि में मानवता के विरुद्ध, , दास व्यापार आदि की समाप्ति के लिए कानून बनाए जाने की आवश्यकता जोर दिया गया। भारतीय संविधान की धारा 23 में इनके लिए विशेष व्यवस्था की गयी है। संविधान स्वीकार किए जाने के बाद अनेक राज्यों ने बंधुआ मजदूरी समाप्ति के लिए कानूनों का निर्माण किया और उसका पालन सुनिश्चित किया । आन्ध्रप्रदेश का साहूकार नियमन कानून 1960, उड़ीसा का

बन्धुआपन समाप्ति कानून 1963 आसाम ग्रामीण ऋण ग्रस्तता राहत कानून 1975, उ.प्र. भूमिहीन कृषक श्रम ऋण राहत कानून 1975 आदि कानून इस बंधुआ मजदूरी की समाप्ति के लिए महत्वपूर्ण कदम रहे हैं। भारतीय संविधान की धारा 371 में व्यवस्था है कि, ष्जो कोई किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विपरीत गैर कानूनी ढंग से श्रम करने पर विवश है ऐसा व्यक्ति एक वर्ष की कैद अथवा जुर्माना अथवा दोनों का भागी होगा।

भारत सरकार ने 4 अक्टूबर 1975 को एक अध्यादेश के द्वारा बंधुआ श्रम को तुरत समाप्त कर दिया गया। 1976 में यह अध्यादेश कानून बन गया। 1886 में बीस सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत बंधुआ श्रम की समाप्ति के लिए (1) बंधुआ श्रम कानूनोंका पूर्णरूपेण पालन करने और (2) इस कार्यक्रम में स्वयंसेवी संस्थाओं की सहभागिता पर जोर दिया गया। भारत सरकार ने बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए राज्यों को 50 रू 50 के अनुपात पर मैचिंग ग्रांट का प्राविधान किया गया है। पुनर्वास के लिए तीन प्रकार की सहायता का प्राविधान किया गया है। भूमि आधारित, पशुपालन आधारित या कौशल आधारित भूमि, आधारित कार्यक्रम के अन्तर्गत भूमि आवंटन, हल– बैल, बीज–खाद, आदि देने का प्राविधान सम्मिलित हो। कौशल आधारित स्कीमों के शिल्प की पहचान, कच्चे माल की आपूर्ति कार्यवाही पूंजी उधार, उपकरण एवं बाजार के साथ संयोजन सम्मिलित किया गया है।

बंधुआ श्रमिकों के संबन्धित स्कीमों की स्वीकृति के लिए राज्य सरकार की तरफ से जिलाधिकारी सक्षम है। इसके लिए जिले में एक जांच समिति का गठन होता है जिसकी जांच के आधार पर पुनर्वास के लिए साधन उपलब्ध करा दिया जाता है।

श्रम मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारी राज्यों का दौरा करते हैं जिससे कि यह पता चल सके कि राज्य सरकार ने बंधुआ श्रमिकों के लिए क्या किया है और क्या नहीं किया है। बीस सूत्रीय कार्यक्रम में स्वयंसेवी संस्थाओं को भी इस निमित्त अनुदान एवं सहायता का प्राविधान किया गया है, जो इस क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण योगदान देते रहते हैं।

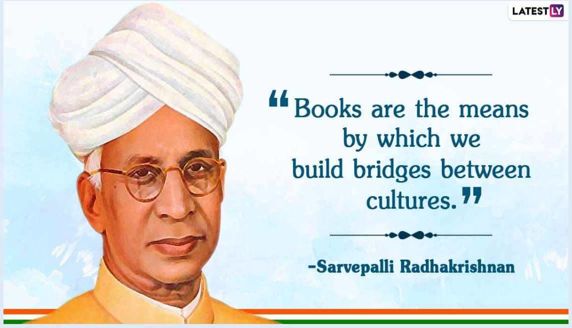

Center for Distance Learning & Continuing Education

MAHATMA GANDHI CHITRAKOOT GRAMODAYA VISHWAVIDYALAYA

Chitrakoot, Satna (M.P.) 485334

E-mail : directordistancemgcgv@gmail.com